ज्ञानामृत

नवम्बर, 1987
वर्ष 23 ❋ अंक 5
मूल्य 1.75

कलकत्ता: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के उद्घाटन पश्चात् कलकत्ता उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश माता चित्तोश मुकर्जी, ब्र.कु. दादी निर्मल शान्ता जी, आर.एल. बधवा, अध्यक्ष इलाहाबाद बैंक तथा ब्र.कु. ललन शिव बाबा की याद में खड़े हैं।

देहली-शक्तिनगर: भ्राता हरदेव सिंह, प्रमुख निरंकारी मिशन, शक्तिनगर स्थित आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन करते हुए।

बीकानेर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के उद्घाटन अवसर पर ब्र.कु. हृदयमोहिनी जी अपने विचार व्यक्त करते हुए।

वर्ष २३ अंक ५
नवम्बर १९८७

मूल्य: १.७५

थानाः महापौर भ्राता वसंतराव दावरवरे जी राजयोगिनी दादी प्रकाशमणी जी के पीस अवार्ड प्राप्ति के पश्चात् थाना में स्वागत करते हुए।

गोहाटी में आयोजित विश्वशान्ति आध्यात्मिक मेले का अवलोकन करते हुए मुख्य मंत्री भ्राता पी.के. महन्ती जी तथा भ्राता अतुल बोरा, सार्वजनिक कार्य निर्माण मन्त्री, आसाम। बी.के. मोहिनी (न्यूयार्क) चित्रों की व्याख्या कर रही हैं।

बम्बई–नैपियन-सी–रोडः सेवाकेंद्र के वार्षिकोत्सव पर दीप प्रज्वलित कर उद्घाटन करती ब्र.कु. दादी प्रकाशमणी जी।

चन्डीगढ़ः 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के उद्घाटन समारोह में मंच पर (बाएं से) डॉ. एस. आर. गोवरीकर, निदेशक सी. एस.आई.ओ. दादी चन्द्रमणि जी, भ्राता के. बेनर्जी, सलाहकार मुख्य प्रबंधक, चन्डीगढ़, भ्राता न्यायमूर्ति आर.एन. मित्तल, डॉ. पी.सी. वशिष्ट तथा बिशप गिल्बर्ट बी. रेगो विराजमान हैं।

इन्दौर: चैतन्य देवियों की झांकी का उद्घाटन करते हुए आयकर आयुक्त भ्राता सी. खुशालदास जी तथा उनकी धर्मपत्नी। ब्रह्म.ओमप्रकाश जी तथा अन्य साथ में खड़े हैं।

भुवनेश्वर: सरस्वती हेमब्रम, उपमंत्री सी. डी.तथा आर. आर. उड़ीसा राज्य, स्थानीय सेवाकेंद्र पर पधारीं। वे ब्र.कु. सन्देशी तथा निरूपमा बहिन के साथ खड़ी हैं।

बीजापुर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम का उद्घाटन कर रहे हैं भ्राता शिवपुत्र स्वामी जी। उनके बाईं ओर ब्र.कु. आशा तथा ब्र.कु. ऊषा तथा दाईं ओर भ्राता दीसाई जी विराजमान हैं।

कटक : न्यायमूर्ति भ्राता एच.एच. मोहपात्रा, पूर्व न्यायाधीश पटना उच्च न्यायालय, चैतन्य देवियों के मण्डप का उद्घाटन करते हुए।

देहली: भ्राता हरदेव सिंह जी, प्रमुख निरंकारी मिशन शक्तिनगर सेवाकेंद्र पर पधारे। वे मेडीटेशन हाल में विराजमान हैं।

कलकत्ता : दुर्गापूजा के उपलक्ष्य में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए निर्वाणमठ के सचिव स्वामी शंकरानन्द जी। साथ में दादी निर्मल शान्ता जी, ब्र.कु.कानन तथा भास्कर भाई उपस्थित हैं।

गोहाटी में विश्व शान्ति आध्यात्मिक मेला के अन्तर्गत आयोजित डाक्टर्स मीट में आसाम के स्वास्थ्य मंत्री भ्राता चन्द्रमोहन जी अपने विचार रखते हुए।

भुवनेश्वरः उड़ीसा के श्रम तथा व्यवसाय मन्त्री भ्राता भूपाल चन्द मोहपात्रा जी आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए।

बम्बईः प्रसिद्ध [illegible] कलाकार आशा पारेख के साथ ब्रहमाकुमारी बहिनें।

दुर्गः 'स्वास्थ्य के लिए राजयोग' विषय पर आस्ट्रेलिया के ब्रह्माकुमार ली. जेम्ज, इंडियन मेडीकल एसोसिएशन दुर्ग द्वारा आयोजित कार्यक्रम में अपने विचार रखते हुए।

परतबाड़ा: चैतन्य नवदुर्गा की झांकी का उद्घाटन दृश्य।

बोकारो स्टील सिटी : दुर्गापूजा के अवसर पर नवनिर्मित राजयोग भवन के प्रांगण में चैतन्य देवियों की झांकी का दीप प्रज्जवलित कर उद्घाटन करते हुए बोकारो स्टील के मैनेजिंग डायरेक्टर भ्राता एस.आर. रामकृष्णन (दायें से चौथे) साथ में उनकी धर्मपत्नी खड़ी हैं। इस अवसर पर नगर प्रशासक भ्राता एस.सी.एल. दास (बाएं से प्रथम) उपस्थित हैं।

लोनावाला में विश्वशान्ति पद्यात्रा का स्वागत करती हुई इन्दु बहन नायक तथा सुमन बहन।

सम्बलपुर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के अन्तर्गत आयोजित प्रदर्शनी में चित्रों की समझानी मुख्य अतिथि भ्राता रमेश बेहरा, कलैक्टर को ब्र.कु.पार्वती दे रही हैं।

नीताल में चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के पश्चात् भ्राता राजबहादुर हिवेदी, पूर्व एम.एल.सी., डा. डी.डी. पंत पूर्व कुलपति कुमाऊँ विश्वविद्यालय, भ्राता प्रताप मैया, एडवोकेट तथा अन्य बी.के. भाई बहिनें चित्र में उपस्थित हैं।

पणजी-गोवा- लायन्ज क्लब के डि. डिस्ट्रिक्ट गवर्नर के सेवाकेन्द्र पर पधारने पर स्वागत करते हुए ब्र.कु. चारू, ब्र.कु. नारायण जी

महबूबनगर: जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के नूतन अध्यक्ष भ्राता डी गोपाल रेड्डी को ब्र.कु. नीरा ईश्वरीय सौगात देते हुए।

बिलासपुर: 'नशीली वस्तुओं के सेवन से हानियां एवं उससे छुटकारा' पर गोष्टि में बोलते हुए आस्ट्रेलिया के भ्राता श्री. जेम्ज जी

चिकमंगलूर : 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम का उद्घाटन करती हुई ब्र.कु. हृदय पुष्पा जी।

सिद्धपुर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' के अन्तर्गत कार्यक्रम में ब्र.कु. विजय प्रवचन करते हुए।

शुजालपुर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के उद्घाटन अवसर प्रवचन करते हुए भ्राता इकबाल भाई, कौमी एकता परिषद के प्रान्तीय सचिव।

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी ९/१९ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओम शान्ति प्रैस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया Regd No. 10563/65-D, (E)—70

अमृत-सूची

१. विकर्म कैसे भस्म हों ? ....१.
२. गोहाटी में विश्व शान्ति आध्यात्मिक मेला सम्पन्न ....१.
३. सहयोग-असहयोग (सम्पादकीय) ....२.
४. संसार सुखमय आएगा ....४.
५. आत्मिक दृष्टि ....५.
७. सतयुग कौन ला सकता है ? ....८.
८. योग में स्थिति के लिये 'मरजीवा जन्म' आवश्यक ....१०.
९. व्यसनों से छुटकारा ....१३.
१०. अज्ञानी का ईश्वर से भय और ज्ञानी का ईश्वर से भय ....१५.
११. ईश्वरीय ज्ञान की विशेषताएं ....१६.
१२. गुरू-प्रथा ....१८.
१३. उतार-चढ़ाव जीवन की सुन्दरता है ....२१.
१४. श्रीमत ....२२.
१५. श्रेष्ठ समाज का सृजन ....२३.
१६. सच्चा साथी कौन ? ....२३.
१७. मन का स्वरूप ....२४.
१८. मीठे बोल-बड़े अनमोल ....२५.
१९. आध्यात्मिक सेवा समाचार ....२७.
२०. संचित्र समाचार ....३१.

गोहाटी में विश्व शान्ति आध्यात्मिक मेला सम्पन्न

गोहाटी में ९ से १६ अक्तूबर तक आध्यात्मिक मेले का शहर के बीचों-बीच हाईस्कूल मैदान में आयोजन किया गया। मेले का उद्घाटन आदरणीय दादी जानकी जी तथा आसाम के मुख्यमन्त्री भ्राता प्रफुल्ल कुमार महन्ता जी ने किया। इस अवसर पर पी. डब्लयू. डी. मिनिस्टर भ्राता अतुल बोरा जी भी उपस्थित थे। मुख्यमन्त्री जी के पहुंचते ही आसाम की प्रथा अनुसार गायन वादन बजाते हुए मन्त्रियों को गेट तक लाया गया। वहां उन्हें आसामी गमछा पहना कर स्वागत किया गया। फिर उन्होंने रिबन काट कर उद्घाटन किया। दादी जानकी जी ने शिव बाबा का झण्डा लहराया फिर ब्र. कु. मोहिनी (न्युयार्क से) ने मुख्यमन्त्री तथा अन्य को मेले का अवलोकन कराया।

इस अवसर पर 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम का भी उद्घाटन किया गया। मंच पर अतिथि गण पधारे तथा दीप प्रज्जवलित कर इस कार्यक्रम का विधिवत उद्घाटन किया। सर्व ने अपने-अपने विचार प्रकट किए। तत्पश्चात् सांस्कृतिक कार्यक्रम के साथ उद्घाटन समारोह समाप्त हुआ।

मेले का समय प्रातः ७ से रात्रि ९ बजे तक रखा गया था जिससें हजारों आत्माओं ने ज्ञान लाभ लिया। उद्घाटन के दिन ९ बजे से एक विशाल शोभायात्रा की भी आयोजन किया गया था। साथ ही पत्रकार सम्मेलन भी रखा गया था। मेले की सूचना के प्रचार प्रसार में आकाशवाणी, दूरदर्शन तथा समाचार पत्रों ने बहुत सहयोग दिया जिस से आसाम राज्य के कोने-कोने तक ईश्वरीय ज्ञान पहुंचा।

विकर्म कैसे भस्म हों ?

सभी मुनष्य दुःख से निवृति और सुख की प्राप्ति चाहते हैं लेकिन दुःख से निवृति तभी होगी जबकि पिछले पाप-कर्मों (विकर्मों) का खाता खत्म हो जाएगा और आगे के कर्म श्रेष्ठ होंगे। विकर्मों से छुटकारा पाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को कर्म, अकर्म और विकर्म की गति का ज्ञान हो तथा सर्वशक्तिमान, पतित-पावन परमात्मा से बुद्धि की लग्न अथवा योग हो। 'योगाग्नि' से पिछले विकर्म दग्ध होते हैं तथा ईश्वरीय ज्ञान द्वारा ही भविष्य के कर्म श्रेष्ठ बनते हैं। अतः विकारी कर्म-बन्धन से मुक्त होकर कर्मातीत बनने के लिए ईश्वरीय 'ज्ञान और योग' ही एकमात्र साधन है।

सहयोग-असहयोग

इस संसार में जितने भी संगठन अथवा संस्थान हैं, उनका उद्देश्य संस्था के सदस्यों के सहयोग से एक सांझे लक्ष्य को प्राप्त करना है। संस्था के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य जिन लोगों को वो लक्ष्य अच्छा लगता है, वे भी यथा योग्य यथा इच्छा उसमें सहयोग देते हैं। सबसे पहले ऐसा संगठन, जो परस्पर सहयोग से चलता है, कुटुम्ब अथवा परिवार है जिसमें जन्म लेते ही व्यक्ति को सहयोग मिलने लगता है और शरीर छोड़ने तक वह सहयोग पाता है। इस जीवन-यात्रा के बीच में अपनी मनोवृत्ति तथा परिस्थिति और स्वभाव के अनुरूप वह सहयोग देता भी है। इस प्रकार सहयोग से ही यह संसार चल रहा है क्योंकि हरेक व्यक्ति को इस बात का थोड़ा-बहुत एहसास है कि एक-दूसरे के सहयोग के बिना न कोई व्यवस्था बन सकती है न मनुष्य की आवश्यकताएँ पूरी हो सकती हैं और न ही उसका जीवन सुखमय हो सकता है। संसार में जितने रिश्तेनाते हैं, वे परस्पर सहयोग ही को उत्पन्न करने के लिए बने हुए मालूम होते हैं। आज हम जिन्हें 'कर्त्तव्य' और 'अधिकार' की संज्ञा देते हैं, वह तो एक प्रकार से कानूनी संज्ञा है। व्यवहार दर्शन में तो उसे परस्पर सहयोग कहना ही अधिक उपयुक्त है।

सहयोग का सम्बन्ध परस्पर स्नेह, सहानुभूति, लक्ष्य अथवा उद्देश्य की एकता, व्यवस्था बनाने की चेष्टा और जीवन को सुखमय बनाने के भाव से है। इसके पीछे मनुष्य की यह मान्यता छिपी है कि हरेक मनुष्य की कुछ आवश्यकताएं हैं और उन सभी आवश्यकताओं को (पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि) व्यवस्था के बिना पूरा नहीं किया जा सकता और इस व्यवस्था को बनाने, चलाने अथवा सफल करने के लिए परस्पर सहयोग जरूरी है। **यदि हम यह कहें कि मनुष्य के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक अथवा बहुमुखी विकास के लिए भी सहयोग अत्यावश्यक है तो अतिशयोक्ति न होगी। जहाँ सहयोग न हो, वहाँ खुशी की कमी, उत्साह का अभाव और जीवन में भारीपन तथा घुटन महसूस होती है और सहयोग न देने वाले तथा सहयोग की आवश्यकता महसूस करने वालों के बीच नाराज़गी, उलाहना, मनमुटाव, अनबन तथा संघर्ष पैदा हो जाता है तथा जीवन में स्नेह और खुशी की बजाय मायूसी रिक्तता, वंचना और गति-अवरोध का अनुभव होता है यहां तक कि अगर बार-बार ही कोई सहयोग न देकर असहयोग की भावना की अभिव्यक्ति करता है तब उसके प्रति सामान्य जन के मन में घृणा, क्रोध और तनाव भी उत्पन्न हो जाते हैं। इस प्रकार यह जीवन सुखमय की बजाय दुःखमय बनने लगता है।**

चूंकि हरेक व्यक्ति अपना जीवन सुखमय बनाना चाहता है इसलिए प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में हरेक के मन में यह तथ्य अंकित है कि सफलता और खुशी के लिए सहयोग देना और लेना चाहिए। परन्तु स्वार्थ, लोभ, निरंकुश इच्छाओं और कुछेक कुत्सित संस्कारों के वशीभूत होकर कई व्यक्ति अपना मतलब हल करने के लिए सहयोग लेना तो चाहते हैं अथवा लेते हैं परन्तु दूसरों को सहयोग देने के समय आंखें फेर लेते हैं अथवा वे सब के हित का विचार न करके, सबकी भलाई न सोचकर अपना ही उल्लु सीधा करना चाहते हैं। इन्हें ही 'मतलबी', 'स्वार्थी', 'स्नेहहीन' अथवा 'मतलब परस्त' कहा जाता है। संसार में संघर्ष पैदा करने वाले, व्यवस्था को बिगाड़ने वाले, संगठन को कमजोर करने वाले, समाज में विघटन पैदा करने वाले तथा किसी कार्य की खुशी को भंग करने वाले यही लोग हुआ करते हैं।

सहयोग की बजाय स्वार्थ को अपनाने वाले लोग यह नहीं समझते कि स्वार्थी को दूसरों की शुभ भावनायें और शुभ कामनायें प्राप्त नहीं होतीं और कि दूसरों के आर्शीवाद तथा उनकी शुभ मनोभावना के बिना प्राप्त की हुई चीज़ वैसे ही होती है जैसे कोई छीनकर, झपटकर, चोरी करके अथवा लूट-खसूट करके अपनी शक्ति का भय देकर अथवा आतंक करके कोई चीज हथिया लेता है। ऐसी प्राप्ति तो निकृष्टतम है। यह उस मिठाई की तरह से है जो देखने में तो सुन्दर और स्वादिष्ट मालूम होती है परन्तु जिसे बनाने वाले हलवाई ने कीट-पतंग, अथवा मक्खी-मच्छर से दूषित चाशनी प्रयोग की हो। इस प्रकार असहयोग मन की किसी-न-किसी प्रकार की मलीनता अथवा प्रदूषण ही का प्रतीक है। हाँ, किसी की परिस्थिति ही ऐसी हो कि तन के रोग, समय की अत्यन्त व्यस्तता, धन की न्यूनता अथवा अभाव के कारण वह सहयोग न दे सकता हो परन्तु ऐसा व्यक्ति मन से शुभ भावना और अपनी लाचारी को ऐसे ढंग से व्यक्त करेगा ताकि जिससे दूसरे को उसकी मजबूरी का एहसास हो।

असहयोग के कई रूप हैं। कोई व्यक्ति अन्य किसी योग्य, कार्य-कुशल, अनुशासित एवं मर्यादा युक्त व्यक्ति को यदि उसकी उन्नति के लिए नये-नये अवसर न देकर स्वयं ही सब प्रकार के अवसरों को अपने ही लिये प्रयोग करे तो इसे क्या कहेंगे? यद्यपि यह स्पष्ट रूप से यह असहयोग मालूम नहीं होता परन्तु यह दूसरों के प्रति हित भावना, स्नेह आदि से तो रहित ही है और स्वार्थ युक्त तथा संघर्ष-उत्पादक है, यह भी तो एक प्रकार का शोषण है। असहयोग केवल उस व्यवहार को नहीं कहा जा सकता कि जिसमें सहयोग मांगने वाले को सहयोग से वंचित रखा जाए बल्कि जहां सहयोग की

आवश्यकता हो और उस आवश्यकता का किसी को पता है और पता होने पर भी तन, मन, धन, शुभ भावना, शुभ कामना, उत्साह वर्द्धक बोल या उत्कर्ष के लिए अवसर अथवा सहुलियत न देना भी तो जाने-अनजाने एक प्रकार का असहयोग ही है। अच्छा, यह 'असहयोग' न सही परन्तु यह 'सहयोग' भी तो नहीं है। सूक्ष्म रूप से सहयोग का अभाव तो है ही।

इसी बात को स्पष्ट करने के लिए कई बार नकारात्मक अथवा ऋणात्मक (Negative) पहलु को भी स्पष्ट करना पड़ता है। उससे गुणात्मक (Positive) पहलु और अधिक स्पष्ट हो जाता है। इसलिए ऊपर सहयोग के अतिरिक्त असहयोग के बारे में भी कुछ कहा गया है क्योंकि यह कहना स्पष्ट करने के विचार से आवश्यक समझा गया है। कोई व्यक्ति धूम्रपान करता है अथवा शराब पीता है तो उसे कहना ही पड़ता है (चाहे हाथ जोड़कर कहना पड़े) कि "भई, सिगरेट मत पीयो", "शराब पीना छोड़ दो" क्योंकि यह तुम्हारे लिये भी हानिकारक है और इससे सारा वातावरण तथा घर-परिवार बिगड़ जाता है। मतलब-परस्ती तो उससे अधिक नहीं तो कम-से-कम उतनी तो खराब है ही।

कहने का भाव यह है कि परस्पर सहयोग या कम-से-कम सहयोग की भावना अथवा उसकी चेष्टा तो आध्यात्मिकता का एक चिह्न है। करुणा, दया, कृपा, लोक-कल्याण सेवा, दान, त्याग ये तो बड़े गुण हैं परन्तु यदि कोई सहयोग की पहली सीढ़ी पर भी नहीं चढ़ा तो मानिये कि वह सच्ची आध्यात्मिकता से दूर खड़ा है। थोड़ा-बहुत सहयोग तो हम एक जाति के पशुओं में भी देखते हैं; मानव तो महान है। अतः केवल स्वार्थपरक जीवन जीने की बजाय उसे दूसरों के लिए भी कुछ जीना चाहिए। सेवा और उत्सर्ग में ही उसका उत्कर्ष है। मानव से अति मानव (Superman) बनने की ओर उसका यह पहला कदम है जो उसमें दिव्यता का विकास करता जाता है।

अभी 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार'—इस नाम से जो सेवा योजना बनाई गई है, उसका यही मुख्य उद्देश्य है कि मनुष्य में यह भावना जागृत की जाये कि वह केवल स्वार्थ ही का जीवन न जिये बल्कि विश्व को एक कुटुम्ब मानकर, अपने सहित सर्व के हित को सामने रख कर, संसार में स्नेह और सौहार्द्र से व्यवहार करता हुआ, इसे सुखमय बनाने में अपना सहयोग दे। इसका यह भी उद्देश्य है कि सहयोगी के अतिरिक्त लोग योगी भी बनें ताकि वे केवल सहायक ही न हों बल्कि सहयोगी अर्थात योगयुक्त होकर सहकारी बनें। इस संसार में इस समय लोग अनेकों प्रकार के दुःखों से पीड़ित हैं और एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को अशान्त एवं दुःखी कर रहा है। सहयोग देने की बात तो अलग रही, बहुत लोग दूसरों से निर्दयता, निरीहता और संतप्त एवं त्रस्त करने वाला व्यवहार करते हैं। इसलिए अब उनके स्वभाव को परिवर्तित करके मानव-मानव को परस्पर सहयोगी बनाना ही इसका लक्ष्य है। हर कोई अपने व्यवसाय अथवा धन्धे से अपना ही पेट पालने में न लगा रहे बल्कि अपनी विशेष योग्यता, कार्य-कुशलता या व्यवसाय क्षमता से दूसरों की भी कुछ भलाई करे—यह इसका एक लक्ष्य है। साथ-साथ वह अपनी ऐसी बुराइयों को भी छोड़े जिनसे दूसरों को कष्ट मिलता है और वातावरण में प्रदूषण अथवा अशान्ति फैलती है—यह भी इस योजना का एक अंग है और जो पहले से ही योगी अथवा सहयोगी हैं वे और अधिक सहयोगी बनें तथा दूसरों को भी सहयोग और विकास का अवसर दें—यह भाव भी इसमें निहित है।

-जगदीश

श्रीगंगानगर: *शान्ति एवं राजयोग प्रदर्शनी एवं नौ देवियों की चैतन्य झांकी का उद्घाटन करते हुए भ्राता ए.एस. चीमा, कर्नल (रि.) एवं माऊंट एवरेस्ट विजेता।*

जबलपुर: *आध्यात्मिक कार्यक्रम में प्रवचन करते हुए आस्ट्रेलिया के फिल्म अभिनेता भ्राता ली. जेम्ज जी।*

संसार सुखमय आएगा... !

परमपिता का संदेश यही है
विश्व शांति का मंत्र यही है
सर्व के सहयोग से,
संसार सुखमय आएगा।
प्रेम की ज्योति जगेगी,
हर मन का दीप मुस्काएगा।
सर्व के सहयोग सें .....
संसार सुखमय आएगा।
हर वर्ग की खाईयों को,
आओ फिर हम पाट दें।
स्नेह की गंगा बहाकर,
दुःख दर्द सभी के बांट लें।
आएगी अब शुभ घड़ी,
हर बाग फिर खिल जाएगा।
सर्व के सहयोग सें .....

झूठ और लूट के साये में,
जो है पल रहे।
काम और क्रोध की,
अग्नि में वो जल रहे।
ज्ञानामृत पिलाओ उन्हें भी,
सर्व के सहयोग सें .....
एक होंगे नेक होंगे,
चँहु ओर शुभ संकेत होंगे।
हर डाली पर होगी हरियाली,
हरे भरे से खेत होंगे,
हर आँगन में खुशियाँ नाचेंगी।
स्वर्ग धरा पर आएगा,
सर्व के सहयोग से, ...
संसार सुखमय आएगा।

ब्रह्माकुमार "प्रकाश" भोपाल

वरंगल: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के अन्तर्गत आयोजित राजनेता तथा नगर निगम सदस्यों के स्नेहमिलन को सम्बोधित करती हुई ब्र.कु. कुलदीप जी।

आत्मिक दृष्टि

बी.के. सूरज कुमार, माउण्ट-आबू

योगी वो नहीं देखता जो संसार देखता है। योगी उसका चिन्तन भी नहीं करता जिसका चिन्तन विश्व करता है क्योंकि योगी का देखना व सोचना अलौकिक व अति महत्वशाली होता है। उसकी दृष्टि से सृष्टि बदलती है, उसके चिन्तन से सत्य प्रकट होता है। योगी के लिए यह विश्व असार व मृत-तुल्य हो जाता है। वह इसे देखते हुए भी नहीं देखता। वह तो देखता है केवल उसे जो अदृश्य है, जो जीवन आधार है, जिसे आत्मा कहा गया है। यह आत्मिक दृष्टि ही योगी की दूसरों पर अलौकिक वृष्टि है। इसी से वह अपनी सर्वोच्च स्थिति बनाने में समर्थ होता है।

आत्मिक दृष्टि के महत्व को समझने के लिए हम ये ईश्वरीय महावाक्य याद करें –

"जब तुम्हारी दृष्टि नैचुरल (स्वाभाविक) रूप से आत्मा,सितारे की ओर जाएगी तब ही संसार की दृष्टि आप धरती के चेतन सितारों की ओर आकर्षित होगी।"

तो इतना महत्व है इस आत्मिक दृष्टि का। यह एक अति सरल अभ्यास भी है। हमें यह ज्ञान स्पष्ट मिल गया है कि सभी शरीरों में भ्रकुटि के बीच चेतन, प्रकाशमान सूक्ष्म आत्मा विराजमान है। बस, अब हमारी नज़र अर्थात् दिव्य बुद्धि रूपी-चक्षु इस आत्मा को ही देखे। इस अभ्यास पर ध्यान देने से सम्पूर्ण पुरुषार्थ सरल हो जाता है।

"देखना व सोचना ही आधार है – Complete (सम्पूर्ण) बनने का या Complaints (शिकायतें) करने का।" – ये ईश्वरीय महावाक्य हमें आत्मिक दृष्टि के महत्व की याद दिलाते हैं। अर्थात् यदि मनुष्य दूसरों की देह देखता है या देहभान से उत्पन्न अवगुण देखता है तो वह सदा दूसरों की Complaints (शिकायतें) ही करता रहता है और इस प्रकार कइयों का जीवन दूसरों की शिकायतें करते-करते ही बीत रहा है। परन्तु यदि हम शरीर में स्थित आत्मा को ही देखते हैं तो हमारा सोचना भी अलौकिक हो जाता है और हम सम्पूर्णता की ओर बढ़ने लगते हैं।

देखना ही सोचने का आधार है –

मनुष्य के विचार सारा दिन बाह्यमुखी होते रहते हैं, उसका मन अति चंचल बनता चला जाता है। वह क्षणभर के लिए भी स्थिरता का अनुभव नहीं करता। इसका सबसे बड़ा कारण दैहिक दृष्टि है क्योंकि जो कुछ मनुष्य देखता है, उस पर उसका मन सहज भाव से चलता रहता है। यदि हम दृष्टि को आत्मिक कर दें तो हमारा सम्पूर्ण चिन्तन स्थिर हो जाए और हम ईश्वरीय जीवन का अनुपम सुख ग्रहण करने लगें।

सिद्धान्त व व्यवहार में समानता हो –

हमारी स्थिति कहीं उन अद्वैतवादियों जैसी न हो जो सिद्धांत रूप में तो यह मानते हैं कि एक ब्रह्म ही सर्वत्र है, उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं, परन्तु व्यवहार में भेद-भाव, छोटे-बड़े का भाव, स्त्री-पुरुष, ऊँच-नीच का भाव रखते हैं कि मेरा आसन ऊँचा हो, दूसरे का नीचा। एक ओर वे भेद को अज्ञान-जनित कहते हैं, दूसरी ओर स्वयं ज्ञानी होकर भी भेद मानते हैं।

हमारे सिद्धान्त व व्यवहार एक रूप हों। जबकि हम जानते हैं कि सभी शरीरों में विभिन्न आत्माएँ विद्यमान हैं तो हमारी दृष्टि भी आत्मिक ही हो, दैहिक नहीं। इस दृष्टि से हम आध्यात्म का जीता-जागता स्वरूप बन सकेंगे।

आत्मिक दृष्टि का अभ्यास –

तो योगी को चाहिए कि वह आत्मिक दृष्टि के महत्व को समझ ले। आत्मिक दृष्टि ही हमें सहज आत्मिक स्वरूप में स्थित करती है। आत्मिक दृष्टि के द्वारा सहज ही बिन्दु रूप का आनन्द लिया जा सकता है।

अतः हम अभ्यास करें – जो भी हमारे सामने आये, उसके मस्तक में हमें एक चमकता हुआ सूक्ष्म सितारा ही नज़र आये। जैसे हम अव्यक्त बाप-दादा को देखते हैं कि जो भी उनके सामने आता है, वे पहले उसे आत्मिक दृष्टि देते हैं, इससे सभी को एक अलौकिक अनुभव होता है। तो चाहे आप दुकान पर बैठे हैं या ग्राहकों से बात कर रहे हैं, ऑफ़िस में बैठे हैं या घर में, यह अभ्यास बढ़ा दें कि जो भी सम्मुख आवे, हम उसे आत्मा ही देखें। और फिर देखें इसका प्रभाव... स्वयं की स्थिति कितनी धैर्यवत् व शान्तचित्त बनी रहेगी और दूसरों को कैसा अलौकिक अनुभव होगा! तो जिन्हें अपना योग-चार्ट अति सुन्दर करना हो वे आत्मिक दृष्टि के अभ्यास की धुन लगा दें।

आत्मा इस देह में मस्तिष्क के समीप मस्तक के अग्रभाग में बैठी एक चेतन शक्ति है, जिसकी तरंगे समस्त शरीर में भी प्रवाहित हो रही हैं व दूर-दूर तक भी जिसका एक-एक संकल्प शरीर के प्रत्येक भाग को प्रभावित कर रहा है। तो यदि हम आत्मिक अभ्यास बढ़ा दें तो हमारा तन, मन दोनों दिव्यता से भरपूर होने लगें।

यह विश्व रूहों की दुनिया लगे –

आत्मिक दृष्टि का अभ्यास हम इतना बढ़ायें, चाहे विशेष रूप से बैठकर, चाहे कर्म-क्षेत्र पर ही, ताकि कम से कम प्रतिदिन एक बार ये संसार हमें रूहों की दुनिया लगने लगे। आत्माओं के सिवाय अन्य कुछ दिखाई ही न दे। अर्थात् एक बार ब्रह्मलोक को हम इस धरा पर ही उतार दें। ऐसे अभ्यास से सहज ही हमें Sweet Silence (आनन्दित शान्ति) का अनुभव प्राप्त होगा।

"आत्मिक दृष्टि का महत्व"

साक्षी भाव व कर्त्तव्य-भाव बढ़ेगा –

आध्यात्म पथ पर साक्षी भाव का परम महत्व है। साक्षी स्थिति अत्यन्त आनन्दित स्थिति है। इससे आत्मा सहज ही बीजरूप स्थिति में स्थित हो सकती है। इस आत्मिक दृष्टि से हम सहज ही स्वदर्शन चक्रधारी बन जाते हैं और हमें यह स्मृति निरन्तर रहने लगती है कि सभी आत्माएँ देह रूपी वस्त्र पहन कर नृत्य कर रही हैं और ये विश्व रूहों की विशाल नाटकशाला है। इससे दिनोंदिन साक्षी स्थिति बढ़ने लगती है और यही साक्षी स्थिति विनाशकाल में हमारे लिए अत्याधिक कल्याणकारी सिद्ध होगी क्योंकि साक्षी स्थिति वाले ही निर्भय व निश्चिंत हो सकेंगे। जब चारों ओर हाहाकार होगा, सब भय से चिल्लायेंगे, साक्षी-भाव वाले इसे अटल भावी जान निश्चिन्त रहेंगें।

और साथ ही साथ यह आत्मिक स्मृति हमें हमारे कर्त्तव्यों की भी याद दिलाती है कि सभी रूहों के प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है। इस प्रकार हम सभी के कल्याण के कर्त्तव्य में भी संलग्न हो जाते हैं और हमें यह भी महसूस होने लगता है कि सभी को हमारी शुभ-भावनाओं की, श्रेष्ठ वायब्रेशन्स की व सूक्ष्म सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है। तो इस प्रकार आत्मिक भाव हमें साक्षी भाव व कर्त्तव्य भाव का सन्तुलन सिखाता है।

बाह्य प्रभाव से मुक्त रहेंगे व एकाग्रता बढ़ेगी

योग के पथानुगामियों की यह प्रमुख शिकायत रहती है कि कलियुग का वातावरण उन्हें बरबस अपनी ओर खींचता है और वे न चाहते भी माया के अधीन होने लगते हैं। निःसन्देह मायावी प्रकोप अति शक्तिशाली रूप से मनुष्य पर प्रभाव डाल रहा है परन्तु जहाँ आत्मिक दृष्टि है, वहाँ ये प्रभाव शक्तिहीन हो जाता है।

अतः आत्मिक दृष्टि का अभ्यास करके देखें तो पायेंगे कि कलियुग हमारे लिए कलियुग है ही नहीं, माया हमारे लिए माया है ही नहीं। आत्मिक दृष्टि हमें कर्म के प्रभाव से भी मुक्त रखेगी व मनुष्यों के प्रभाव से भी। दूसरों के गन्दे वायब्रेशन्स भी हमें प्रभावित नहीं करेंगे बल्कि इसके विपरीत हमारी आत्मिक दृष्टि उन पर श्रेष्ठ प्रभाव डालेगी व उन्हें पवित्रता की ओर प्रेरित करेगी और इस प्रकार हम पायेंगे कि हमारी एकाग्रता की शक्ति बहुत बढ़ेगी।

हमारी अपवित्रता समाप्त होगी व दूसरों की आसुरी वृत्तियाँ नष्ट होंगी –

पतित देह का आकर्षण, देह का दिखावा, नग्न प्रदर्शन, फैशन निःसन्देह, योग मार्ग में बाधक हैं। परन्तु आत्मिक दृष्टि वाले को ये मिट्टी के खिलोने मात्र ही लगेंगे। वास्तव में पतित देह को देखेंगे तो देह आकर्षित अवश्य ही करेगी। परन्तु यदि देखेंगे ही चेतन आत्मा को तो चेतन आत्मा फिर जड़ प्रकृति के अधीन नहीं होगी। देह को देखने से देह का चिन्तन चलता है, वृत्ति खराब होती है और आत्मा स्वस्थिति को खो देती है। तो आत्मिक दृष्टि के महत्व को जानकर इसका अभ्यास बढ़ायें।

इसके अतिरिक्त यदि कोई मनुष्य आसुरी वृत्ति से हमारे सामने आता है तो हमारी आत्मिक दृष्टि उसकी आसुरी वृत्ति का संहार करेगी अर्थात् आत्मिक दृष्टि असुर-संहारिणी है। इसलिए तो दिखाया है कि देवियों के आगे असुर बुरी वृत्ति से आते थे परन्तु सम्मुख आते ही चरणों में गिर जाते थे। अतः हम आत्मिक दृष्टि से दूसरों की वृत्तियों को पावन करने के अनुभवी बनें। नहीं तो यदि हमारी दृष्टि आत्मिक नहीं होगी तो दूसरों की बुरी वृत्ति अवश्य ही हमें प्रभावित करेगी।

आत्मिक दृष्टि जादू का काम करेगी –

आत्मिक दृष्टि में सचमुच ही जादू है। एक शस्त्रधारी, शक्तिशाली व्यक्ति हमारी आत्मिक दृष्टि पड़ते ही स्वयं को निर्बल महसूस करेगा, उसे अपने शस्त्रों की भी अविद्या हो जाएगी और वह स्वयं को समर्पित कर देगा। ये ही दृश्य अब विनाशकाल में हमारे सम्मुख उपस्थित होंगे। देवियों के समक्ष आसुरी वृत्ति वाले लोग आयेंगे परन्तु दृष्टि पड़ते ही देवियाँ उनके सामने से अदृश्य हो जाएंगी।

ऐसे ही यदि हम आत्मिक दृष्टि रखते हुए दूसरों को ज्ञान देते हैं तो उन्हें अपने सिद्धान्तों की असत्यता सहज ही अनुभव होने लगती है और वे ईश्वरीय सिद्धान्तों की सत्यता को स्वीकार कर लेते हैं। हमारी आत्मिक दृष्टि का बल, दूसरों को सहज ही निर्संकल्प भी बना सकता है। परन्तु इन सबके लिए चाहिए – आत्मिक दृष्टि का बल।

आत्मिक दृष्टि नज़र से निहाल करेगी –

हमारी आत्मिक दृष्टि दूसरों को घर की राह दिखायेगी व उन्हें विभिन्न अलौकिक अनुभव करायेगी। वे हमारे नयनों में अपना भविष्य देख सकेंगे। हमारी दृष्टि उनके लिए पाप-नाशक भी होगी व उन्हें योग-अभ्यास में मदद भी करेगी। दृष्टि पड़ते ही उनके मुख से निकलेगा – "हम तो निहाल हो गये।"

आत्मिक दृष्टि एकता का बल बढ़ायेगी –

आत्मिक दृष्टि से सभी रूहों के प्रति स्नेह की भावनाएँ व शुभ भावनाएँ स्वतः ही जागृत होती हैं। इसी से रहमभाव भी उदय होता है व परचिन्तन समाप्त होकर ईर्ष्या, द्वेष व घृणा की भावनाएँ नष्ट हो जाती हैं और इन्हीं धारणाओं के कारण हमारा संगठन सुखदाई बनकर एकता के सूत्र में बंध जाता है।

हद की वृत्तियाँ बेहद में बदल जायेंगी –

जीवन को निस्सार करने वाली हद की भावनाएँ समाप्त होकर मनुष्य का दृष्टिकोण विशाल होने लगता है। तथा इसका प्रभाव सेवा के विस्तार पर बहुत पड़ता है। आत्मिक दृष्टि से ज्ञान देने से दूसरों की अनुभव-शक्ति बढ़ेगी, उन्हें अलौकिक आकर्षण होगा और वे सहज रूप से इस पवित्रता के पथ को स्वीकार कर सकेंगें।

तो आओ, हम सब आज से देह को देखने की पुरानी आदत को ईश्वरीय-ज्ञान-यज्ञ में स्वाहा कर दें। जैसे शिव परमात्मा सभी को आत्मा ही देखते हैं, वैसे ही हम भी बाप समान बनने के लिए सबको आत्मा ही देखें। तब इस विश्व में और कुछ भी देखते हुए हमें दिखाई नहीं देगा, हमारी वृत्ति उपराम हो जाएगी, हम देह व देह के सम्बन्धों में मोह से मुक्त हो जाएंगे और स्वयं को सतत शीतल ईश्वरीय छाया में अनुभव करेंगे। यही तैयारी हमें होवन-हार महाविनाश से पहले पूर्ण करनी है। हम इस अभ्यास की रात-दिन धुन लगा दें, फिर देखें कि कैसे हम निरन्तर योग की सर्वोच्च स्थिति को सहज ही प्राप्त कर लेते हैं।

गीत

हम सुखमय संसार लाएंगे

सर्व के सहयोग से हम, सुखमय संसार लाएंगे,
भाईचारे के नाते से हम, हाथ में हाथ मिलाएंगे।

कपटों से भरी दुनिया में, दुख अशांति पायी,
दुराचार और बदनीति में, जीवन सारी लुटायी।
भूले हुए थे सत्यकर्म को, फिर से याद दिलाएंगे
भाई चारे के नाते से.....

आए अकेले, जाना अकेला, साथ न कोई आया,
एक ही घर के भाती हैं हम, भेद यही भुलाया।
एक पिता के बच्चे हैं हम मिलकर हाथ बढ़ाएंगे,
भाईचारे के नाते से.....

कौन गरीब है, कौन साहूकार, भेद दिये मिटाई
कौन हिन्दू है कौन मुसलमां, सब हैं भाई-भाई।
दुश्मन नहीं यहां कोई किसी का, मतभेदों को मिटाएंगे,
भाईचारे के नाते से.....

काहे लड़ें आपस में हम, काहे खून बहाएं,
पूज्य भूमि का भारत हमारा, काहे पाप बढ़ाएं।
सुख-शान्ति को गले लगाकर, नर्क को स्वर्ग बनाएंगे,
भाईचारे के नाते से.....

–ब्रह्माकुमारी गोदावरी, बम्बई

कोल्हापुर: राजयोग कक्ष का उद्घाटन करती हुई ब्र.कु. शीलू जी।

सिन्दरी: शिव-दर्शन प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए कार्यकारी महाप्रबंधक भाता जी.एन.श्रीनिवासन जी। साथ में ब्र.कु. सुषमा तथा अन्य।

सतयुग कौन ला सकता है?

दूसरे देशों के लोग भारत को एक धर्म-प्रधान देश समझते हैं परन्तु वास्तव में आज यहाँ धर्म-भ्रष्टता और कर्म-भ्रष्टता ही की प्रधानता है। यहाँ की जनता, यहाँ के समाचार पत्र और नेता सभी मुक्त-कंठ होकर कहते हैं कि आज यहां के वासियों के चरित्र का स्तर बहुत गिरा हुआ है। साधारण जनता की क्या कहें, आज तो साधू लोग भी साधना के पथ को छोड़कर धन इकट्ठा करने की धुन में हैं। जिन नेताओं के हाथों में देश की शासन-सत्ता है वे भी कल तक भले ही यह सोचते रहे हों कि वे भ्रष्टाचार के उन्मूलन के बारे में कोई सफल और सबल कार्यवाही कर सकेंगे परन्तु आज तो वे भी खुले-आम यह स्वीकार करते हैं कि उनके प्रयत्नों से देश की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ, बल्कि भ्रष्टाचार बढ़ा ही है और वे कहते हैं प्रजातंत्र में भ्रष्टाचार का उन्मूलन नहीं हो सकता । अतः सोचने की बात है कि जबकि सरकार भी इस बारे में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ रही और जबकि यहाँ लाखों साधू-संन्यासी भी प्रतिदिन कथा और उपदेश सुनाते हैं तो फिर यह देश इतना पतित क्यों हो गया है और आख़िर इस देश का क्या बनेगा?

क्या राजनीतिक नेता और संन्यासी भ्रष्टाचार दूर कर सकेंगे?

प्रश्न उठता है कि भारत में फिर वही सतयुग का सतोप्रधान वातावरण पैदा करने की अथवा सारे कलियुगी भारत को पतित से पुनः पावन बनाने की योग्यता और सामर्थ्य किसमें है? क्या मन्त्रियों और राजनीतिक नेताओं में? उत्तर मिलेगा–'नहीं', क्योंकि राजनीतिक नेता तो स्वयं भी भ्रष्टाचार के दोष अथवा आक्षेप से मुक्त नहीं हैं। बहुत-से नेताओं की तो अपनी भी जांच-पड़ताल होती रहती है और कई नामी नेताओं पर जनता का यह आक्षेप है कि वे भ्रष्टाचारी मन्त्रियों और व्यापारियों के भ्रष्ट कर्मों पर परदा डालते हैं और पक्षपात करते हैं। अन्य नेताओं के विषय में जनता की यह धारणा है कि वे दल-बन्दी और गुट-बन्दी करके देश को हानि पहुँचा रहे हैं और वातावरण को बिगाड़ रहे हैं। अतः भ्रष्टाचार का अन्त करना राजनीतिक नेताओं के बस की बात नहीं है।

अब प्रश्न उठता है कि यदि राजनीतिक नेता नहीं तो क्या साधू-संन्यासी, आचार्य, धार्मिक नेता यह कार्य करने में समर्थ हैं? इसका उत्तर भी वही "न" ही है, क्योंकि ये भी अपने धर्म-कर्म को छोड़ बैठे हैं। इस वर्ग के लोग तो पिछले २५०० वर्षों से सुधार की कोशिश करते चले आये हैं परन्तु आज परिणाम बिल्कुल उल्टा ही है। **आप ही सोचिये कि जो व्यक्ति कर्मों के संन्यास को और तटस्थता को मानते हों उनसे कर्मों के सुधार की हम क्या आशा रख सकते हैं?** इस कलिकाल में साधु और विद्वान इत्यादि तो स्वयं भी संसार चक्र में फंसे हुए हैं, वे दूसरों को श्रेष्ठाचारी और निर्विकारी कैसे बना सकते हैं? उनके कर्मों को देखकर ही तो जनता नास्तिक और भ्रष्टाचारी बनी है और धर्म को धन कमाने का एक ढंग और ढोंग समझ कर धर्म के प्रति उदासीन हुई है।

इस प्रसंग में मुझे एक छोटी-सी कहानी याद आती है। कहानी इस प्रकार है :–

प्राचीन काल में किसी न्याय-प्रिय राजा के राज्य में चार व्यक्ति चोरी करते हुए पकड़े गये। राजा ने उन्हें फाँसी की सज़ा दी। जब उनमें से तीन व्यक्ति फाँसी पर चढ़ चुके तो चौथे ने कहा–"राजा ने मेरे लिए जो सज़ा निश्चित की है वह मैं भोगने के लिये तैयार तो हूँ लेकिन यदि मुझे राजा फाँसी का दण्ड न देता तो स्वयं राजा को भी बहुत लाभ होता, क्योंकि मैं एक ऐसी विद्या जानता हूं जिससे लोहा भी सोना बन सकता है।"

जेल के कोतवाल इत्यादि ने सोचा कि राजा को चोर की बात अवश्य ही बतलानी चाहिये ताकि बाद में कहीं राजा मुझ पर इस बात को छिपाने का आरोप न लगाये। अतः कोतवाल ने सारा समाचार राजा को सुनाया। राजा ने कोतवाल को कहा-"इस चोर को फाँसी पर न चढ़ाया जाए बल्कि मेरे सम्मुख लाया जाए।" जब वह चोर राजा के सामने लाया गया तो राजा ने उससे कहा-"तू सच बता, क्या तू लोहे को सोना बनाना जानता है?" चोर ने कहा "हाँ हजूर, मैं सच कह रहा हूँ। क्या मजाल कि मैं आपके आगे गुस्ताखी कर सकूं या झूठ बोल सकूँ।" राजा ने बहुत-सा लोहा निकलवा कर उस चोर के सामने रखवा दिया।

जब जनता ने यह बात सुनी तो बहुत-से लोग उस स्थान पर आकर इकट्ठे हुए। लोहे को सोना बनाने की विद्या से बढ़कर भला और कौनसी विद्या हो सकती है? सब लोग बड़ी उत्सुकता से खड़े थे कि देखें अब क्या होता है।सभी का ध्यान चोर और लोहे की तरफ था। अपने अपने मन में सभी सोच रहे थे कि यदि चोर लोहे को सोना न बना सका तो उसे बहुत कड़ा दण्ड मिलेगा और सभी के सामने उसे लज्जित होना पड़ेगा।

आख़िर उस चोर ने किया क्या कि वृक्ष का एक पत्ता तोड़कर और उसको मरोड़कर मुख से कुछ मन्त्र कहता रहा। कुछ देर के बाद सबकी उपस्थिति में राजा से

बोला-"हजूर यह औषधि तैयार है और लोहा भी मौजूद है। इस औषधि से लोहा बदलकर सोना हो सकता है... परन्तु एक शर्त है।" इतना कहकर चोर खामोश हो गया। तब राजा ने कहा-'क्या शर्त है?' चोर बोला—"महाराज! मैं तो चोर हूँ, इस कार्य के लिये एक ऐसा व्यक्ति चाहिये जिसने कभी भी चोरी न की हो। ऐसा व्यक्ति जब इस औषधि को लोहे से छुएगा तभी लोहा सोना बन सकेगा।"

वहाँ मन्त्री महोदय भी उपस्थित थे। उन्होंने इकट्ठे हुए लोगों से कहा कि जिसने कभी चोरी न की हो वह आगे आ जाए। परन्तु बार-बार यह घोषणा करने पर भी कोई आगे नहीं बढ़ा। आखिर मन्त्री जी ने कोतवाल साहिब की ओर देखते हुए कहा-"आइये ना! आप क्यों नहीं आते?" कोतवाल ने उत्तर दिया-"जनाब, मेरे अपराध के लिये मुझे क्षमा कीजिये, बात यह है कि मैंने लड़कपन में अपने घर के पास वाले बगीचे से चोरी से आम तोड़कर खाये थे।" तब मन्त्री ने एक अन्य उच्चाधिकारी को सम्बोधित किया। उसने कहा-"क्या बताऊँ, मैंने भी अपने दोस्त की किताबें चुराई थीं।" इस प्रकार किसी ने एक कही, किसी ने दूसरी चोरी बताई। अन्त में राजा ने मन्त्री को कहा—"आप ही आईये।" मन्त्री ने उत्तर दिया-"महराज, मैंने तो चार बार चोरी की है।" अब तो राजा स्वयं ही शेष रह गया था। सभी उसकी ओर देखने लगे। राजा समझ गया। वह लज्जा अनुभव करते हुए और कुछ-कुछ मुस्कराते हुए कहने लगा कि "लड़कपन में पाँच-छः बार मैंने भी चोरी की थी।"

अब सभी की यह आशा बनी थी कि राजगुरु ही अब इस कार्य के लिये आगे आयेंगे और सभी की लाज रख लेंगे। परन्तु जैसे ही सभी ने उनकी ओर देखा वैसे ही वह मुख नीचा करके बोल पड़े—अजी हम तो रोज़ कहते हैं कि यह सारा संसार मिथ्या है। यहाँ तो झूठी माया और झूठी काया है। आप देखते हैं कि बछड़ा अपनी गऊ माता के दूध को झुठा जाता है, मधु-मक्खी मधु को झुठा जाती है। भ्रमर पुष्प को झुठा जाता, अजी यहाँ कौन चीज़ बाकी है जो झूठी न हो? आप मेरी ओर क्यों देखते हैं?"

इस पर चोर ने कहा—"महाराज, यदि सभी झूठे और चोर हैं तो फाँसी की सज़ा केवल मेरे लिये ही क्यों निश्चित की गई है? जहाँपनाह, दूसरी बात यह है कि यह लोहा भी सोना नहीं बन सकता क्योंकि इसके लिये तो वही आदमी चाहिये जिसने कभी चोरी न की हो।"

इसी प्रकार हम कहते हैं कि यह लोहयुगी (Iron-Aged; कलियुगी) भारत भी स्वर्णयुगी (Golden-Aged; सतयुगी) नहीं बन सकता जब तक कि पूर्ण-पावन आत्मा इस कार्य को हाथ में नहीं लेती । भले ही गीता-ज्ञान रूपी औषधि मौजूद हो, तो भी आज के पत्थर-बुद्धि मनुष्य तब तक पारस-बुद्धि नहीं बन सकते जब तक बनाने वाला स्वयं पारसनाथ, पूर्ण-पवित्र और कल्याणयुक्त न हो। ऐसा तो एक परमात्मा ही है जिसे 'पतित-पावन' और कल्याणकारी होने के कारण 'शिव' अथवा 'सदा-शिव' कहते हैं। नर को श्री नारायण और नारी को श्री लक्ष्मी अर्थात् भ्रष्टाचारी मनुष्य को श्रेष्ठाचारी बनाने वाला वह एक ही 'देवों का देव' परमात्मा ही है। वही सच्चे गीता-ज्ञान की औषधि से भारत के इस रोग को हर सकता है और हरा-भरा कर सकता है। इस लिये उसे ही 'हरा' अथवा 'हरि' कहते हैं। उसके बिना तो हाहाकार ही होता रहेगा, जयजयकार तो होगी ही नहीं।

ओहो! आज सभी नास्तिक बन कर उस एक खेवनहार प्रभु को भूल गये हैं और डुबाने वाले पत्थरों से आशा लगाते हैं नाव बनकर पार लगाने की!! ज्ञान का गुप्त चक्षु न होने के कारण वे यह नहीं सोच सकते कि जिसे 'पतित-पावन' कहा गया है, वही गुप्त (अव्यक्त) परमपिता परमात्मा शिव अब गुप्त (कोलाहल के बिना) रीति से भारत-माताओं के द्वारा गीता-ज्ञान और सहज राजयोग सिखाकर भारत को पुनः भ्रष्टाचारी से श्रेष्ठाचारी अथवा नरक से स्वर्ग बना रहा है।

खण्डवा : *आस्ट्रेलिया के प्रसिद्ध अभिनेता भ्राता ली-जेम्स, माणिक्य स्मारक वाचनालय के हाल में आयोजित कार्यक्रम में अपना जीवन परिवर्तन का अनुभव सुनाते हुए। मंच पर (बाएं से) भ्राता इन्द्रकुमार अरोरा, ब्र.कु. विमला, प्रसिद्ध साहित्यकार भ्राता रामनारायणजी उपाध्याय तथा सिविल जज भ्राता बी.डी. राठी जी।*

योग में स्थिति के लिये 'मरजीवा जन्म' आवश्यक

ले. ब्रह्माकुमारी कमला, रायपुर

यह बात प्रसिद्ध है कि योग में स्थित होने से मनुष्य को आनन्द की प्राप्ति होती है। इसलिये बहुत लोगों के मन में यह शुभ इच्छा बनी रहती है कि योग सीखें ताकि प्रभु-मिलन का आनन्द भी प्राप्त करें और रोग तथा शोक से भी दूर हों। परन्तु वे समझते हैं कि योग में स्थित होना सहज नहीं है। अतः वे निराश होकर बैठ जाते हैं। परिणामस्वरूप वे भोगी बने रहते हैं। आत्मा के स्वरूप में तथा परमपिता परमात्मा की स्मृति में स्थित होने की बजाय उनकी स्थिति देह में होती है। उनकी वृत्तियाँ विषयों की ओर भागती हैं परन्तु सारी आयु विषयों को भोगने पर भी उनकी तृष्णा नहीं मिटती। बल्कि "आप भया बूढ़ा, तृष्णा भई जवान," वाली उक्ति उन पर घटती है। वे भोगों को क्या भोगते हैं, वास्तव में तो भोग ही उन मनुष्यों का 'उपभोग' कर जाते हैं। उनकी इच्छायें बढ़ती जाती हैं और वे स्वयं कमज़ोर होते जाते हैं। इसलिए अन्त में भोगी लोगों को पश्चात्ताप में हाथ मसलने पड़ते हैं।

देखा जाए तो वास्तव में योग में स्थित होना कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है बल्कि भोगी जीवन की हानियों और योगी जीवन के लाभों को ठीक-ठाक समझ कर केवल मन और दृष्टि को बदलने ही की आवश्यकता है। यदि भोगी और योगी के श्रवण-मनन, बोल-चाल, दृष्टि-वृत्ति, स्मृति-स्थिति इत्यादि के अन्तर को जानकर परमपिता परमात्मा की ज्ञान-युक्त स्मृति का अभ्यास किया जाए तो मनुष्य सहज ही योगी बन सकता है। इसलिये मनुष्य को चाहिए कि भोगी जीवन में जो रोग और शोक हैं और योगी जीवन में जो स्वास्थ्य और आनन्द है, उनको तोले और मन की आँखें खोले और अब योगी बने।

भोगी और योगी में अन्तर

भोगी का मन कर्मेन्द्रियों के वशीभूत होकर कभी कन-रस, कभी अन्न-रस, कभी धन-रस कभी मान-रस और कभी शान-रस के पीछे निरन्तर भागता ही रहता है। परन्तु योगी के लिए संसार में केवल एक ही रस है। भले ही योगी भी भोजन आदि करता है परन्तु वह एक परमात्मा की ही लग्न में मग्न अथवा मस्त रहता है। योगी देह में रहते हुये भी 'विदेही' होता है। उसे कर्मेन्द्रियों के विषय आकर्षित या वशीभूत नहीं करते।

योगी का ध्यान एक ही स्थान (परमधाम) पर रहता है, इसलिए वह एक ही स्थिति में रहता है। योगी अपने मन को एक परमात्मा ही का ठिकाना देता है, परन्तु भोगी का मन बे-ठिकाना होकर कभी इधर, कभी उधर भटकता रहता है। इसलिए उसकी स्थिति डाँवाडोल रहती है और वृत्ति चंचल होती है। इस प्रकार, योगी और भोगी की मति में बहुत अन्तर है। योगी की मति (बुद्धि) ईश्वर में और भोगी की विषयों को भोगने में होती है। इस कारण योगी की गति सद्गति और भोगी की गति दुर्गति होती है। योगी की मति (बुद्धि) ईश्वरीय मत पर आधारित और भोगी की माया-मत पर आधारित होती है।

इसके परिणामस्वरूप योगी का बोलना, चलना, सुनना सब कुछ न्यारा और प्यारा होता है। योगी के बारे में यह बात मशहूर है कि वह 'अन-हद' नाद सुनता है। परन्तु, 'अनहद नाद' से हमारा अभिप्राय यह नहीं है कि वह अपने अन्दर कोई ध्वनि सुनता रहता है, जैसे कि कई हठयोगी लोग मानते हैं। बल्कि हमारा भाव यह है कि **योगी जब संसार में कोई शब्द सुनता है तो वह उसका अर्थ अलौकिक रीति और हदों से ऊपर उठकर करता है।** उदाहरण के रूप में, भोगी 'भाई' शब्द का संकुचित और लौकिक अर्थ लेकर दैहिक भाइयों को ही अपना भाई समझता है परन्तु योगी इस हद से उठकर सारी सृष्टि की मनुष्यात्माओं को अपना भाई मानता है।

योगी की दृष्टि में भी भोगी की अपेक्षा कुछ और ही बसता है। योगी की एक आँख मुक्ति पर और दूसरी जीवन्मुक्ति पर लगी रहती है। परन्तु भोगी का ध्यान इस विकारी संसार में तथा दैहिक नातेदारों की मोह-ममता में अथवा निन्दा-स्तुति में ही डोलता रहता है। वह इन्द्रियों के विषय-विकारों ही को ढूँढ़ता और देखता रहता है। योगी इस कलियुगी विकारी दुनिया को मानो देखते हुए भी नहीं देखता।

इसी प्रकार, योगी भले ही पाँव से तो इसी संसार में ही चलता-फिरता रहता है परन्तु उसका मन परमधाम ही की ओर चलता है। वह जानता है कि मैं परमधाम (शान्ति धाम) से आया हूँ और मुझे वहाँ ही लौटकर जाना है। अतः उसका मन शान्त और उपराम रहता है। परन्तु भोगी का मन वहाँ जाता है जहाँ मुख स्वादिष्ट व्यञ्जनों का भोग कर सकता हो, आँखें चमक-दमक को देख सकती हों, कान गाना-बजाना सुनकर विकार-युक्त 'सुख' दे सकते हों। भोगी को इस मृत्यु लोक की विषय-चाशनी के सिवा कुछ सूझता ही नहीं। अतः वह रोग-शोक को भोगता हुआ अन्ते मृत्यु का ग्रास बन जाता है।

इन सभी बातों से स्पष्ट है कि योगी संसार में रहते हुए भी संसार के स्थूलत्व से मन को हटाकर, उसे परमपिता परमात्मा ही पर 'एकटिक' करता है। परन्तु भोगी मनुष्यों की स्थिति 'एक-टिक' नहीं रहती, कारण कि वे जिन विषयों-व्यक्तियों से योग लगाते हैं, वे स्वयं भी अचल नहीं हैं। भोगियों को ज्ञान और भान ही चंचल वस्तुओं का है जब कि योगी को ज्ञान और ध्यान ही अचल परमात्मा का रहता है। अतः योगी और भोगी के इस अन्तर को जानकर तथा परमात्मा, परमधाम, मुक्ति, जीवन्मुक्ति आदि का ज्ञान प्राप्त करके दृष्टि और स्मृति को परमात्मा की ओर लगाने से योगाभ्यास सहज हो जाता है।

योग में स्थित कैसे हों?

आज परमात्मा के मानने वाले बहुधा लोग कहते हैं कि **सभी** जीव-प्राणी परमात्मा ही के रूप हैं। इस बात पर अच्छी तरह विचार करने से आप इसी निर्णय पर पहुँचेंगे कि **सभी** को परमात्मा मानने से तो मन की एकटिक अवस्था हो ही नहीं सकती। **सभी** को परमात्मा के **नाना** रूप मानने से तो मन को **एकाग्र** करने का प्रश्न ही नहीं उठता। योग में स्थिति प्राप्त करने के लिए तो मन को अनेकत्व से निकाल कर **एक** परमपिता परमात्मा पर ही **एकाग्र** करना होता है। अतः पहले तो यह जानना चाहिये कि परमात्मा **विभु** (सर्व व्यापक) नहीं है बल्कि **अणु-सम** है, एक **ज्योति-बिन्दु** है, वह **एक** है, उसका रूप **एक** है, उसका धाम **एक** है और उस **एक** ही की स्मृति में एक-टिक स्थित होना ही योगाभ्यास करना है। उस एक परमात्मा ही में टिकाने वाला 'ज्ञान' ऐसा अंकुश है जो कि मन-रूपी मीनाक्ष हाथी को ठीक रास्ते पर ले जा सकता है। उस ज्ञान के अतिरिक्त अन्य जितने भी तथा-कथित ज्ञान हैं उनसे आत्मा की योग में स्थिति नहीं हो सकती।

अतः योग में सहज रीति स्थित होने के लिए पहले तो परमप्रिय परमात्मा के नाम 'शिव', रूप 'बिन्दू-सम ज्योतिर्लिङ्गम्', धाम 'ब्रह्मलोक', सम्बन्ध 'परमपिता' इत्यादि का निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। योग में स्थिति ध्रुव तभी होगी जब ज्ञान की नींव पक्की होगी। जैसे दीपक पर चिमनी (Chimney) चढ़ी होने से दीपक की लौ बुझती नहीं है; वैसे ही योग के साथ ज्ञान होने से आत्मा की ज्योति भी बुझती नहीं है।

योग में स्थिति के लिए अभ्यास की आवश्यकता

कोई मनुष्य कह सकता है कि – "परमपिता परमात्मा का यह वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने पर भी मेरा मन तो फिर भी भोगों ही की ओर भागता है; इसके लिए मुझे क्या करना चाहिए?" इसका समाधान यह है कि योग का **अभ्यास** बार-बार करना चाहिए। योग में दृढ़ स्थिति प्राप्त करने के लिए कोई कठिन क्रिया, कोई आसन, कोई प्राणायाम इत्यादि करने की आवश्यकता नहीं है परन्तु परमपिता परमात्मा की स्मृति के **अभ्यास** ही की परम आवश्यकता है। इस **अभ्यास** से पुराने संस्कार ढीले होते जायेंगे, उनका वेग घटता जायेगा और मन को ईश्वरीय स्मृति की टेव पड़ती जायेगी और उसे ईश्वरीय आनन्द का अनुभव आकर्षित करने लगेगा। अतः मन की उच्छृङ्खलता से घबराकर अभ्यास को छोड़ना कभी नहीं चाहिए, बल्कि अभ्यास को जारी रखना चाहिए। थोड़े से समय में मन ईश्वरीय स्मृति में स्थित होने लगेगा।

आप देखते हैं कि पहले छोटा शिशु अपने माता-पिता ही को पहचान पाता है और अभ्यास द्वारा उनसे ही अपने स्नेह और स्मृति का नाता जुटाता है। जब वह कुछ बड़ा होता है तो वह स्नेह और स्मृति माता-पिता से थोड़ा हटकर सहपाठियों और दोस्तों से जुट जाती है। अधिक बड़ा होने पर और विवाहित होने पर उसका स्नेह और उसकी स्मृति अपनी पत्नी के साथ जुट जाती है और फिर बाद में वहाँ से थोड़ी हटकर बच्चों में चली जाती है। इससे सिद्ध है कि मनुष्य का स्नेह और स्मृति एक जगह से हट कर दूसरी जगह लग जाया करती है; उसके लिए कुछ समय की और कुछ अभ्यास की आवश्यकता होती है। ठीक इसी प्रकार, अब योगी बनने के लिये भी मन की सच्ची लग्न अथवा स्मृति परमात्मा से ही जुटानी है।

कुछ ही समय में यह अभ्यास इतना परिपक्व हो जाएगा कि निद्रा में भी परमात्मा के ही सुन्दर स्वप्न आयेंगे। जैसे लोभी मनुष्य को नींद में भी पैसा याद आता है, कामी व्यक्ति को स्वप्न भी स्त्री ही के आते हैं वैसे ही योगी को स्वप्न में भी परमप्रिय परमपिता परमात्मा ही की याद आयेगी। इस पर हमें एक दृष्टान्त याद आता है –

एक बार कपड़े का एक व्यापारी दिन-भर कपड़ा बेचने के धन्धे से थक कर रात को चादर तान कर सो गया। अभी सोये हुए उसे कुछ ही समय हुआ था कि वह खर्राटे लेने लगा। खर्राटों की आवाज़ सुनकर उसी कमरे में उसकी बूढ़ी माता जाग गई। इतने में ही उसे महसूस हुआ कि उसका बच्चा नींद में ही अपने ऊपर की चादर को दो हाथों के बीच खैंचकर वैसे ही फाड़ रहा है जैसे कि कपड़े के दुकानदार कपड़ा फाड़ा करते हैं। उसने तुरन्त आवाज़ दी – "अरे बेटा, यह क्या करता है? तू चादर क्यों फाड़ रहा है? बेटा, तुम्हें निद्रा में भी दुकान की, ग्राहकों की और कपड़ों के थानों ही की याद आती है?"

बेटा करवट बदलते हुए बुड़बुड़ाया – "माँ,तू मेरे दुकान के कामों में दखल न दिया कर। अब ग्राहकों का समय है। मुझे कपड़ा बेचने दे।"

ठीक इसी तरह यदि हम ईश्वर की स्मृति में रहने का धन्धा अथवा अभ्यास करें और विषयों के आकर्षणों को इसमें हस्तक्षेप न करने दें तो जागृत अवस्था की तो बात ही अलग रही, स्वप्न में भी हमें आध्यात्मिक और आनन्ददायक दृश्य ही दिखाई देंगे।

अभ्यास में विकल्प और विघ्न

कई लोग कहते हैं – "अभ्यास करने की मन्सा से ही हम प्रातःकाल को उठकर बैठते हैं परन्तु मन बहुत तूफ़ान मचाता है। अनेक प्रकार के विकल्पों से चित्त परेशान होने लगता है और अभ्यास हो ही नहीं पाता।" वे पूछते हैं कि – "अभ्यास में स्थिरता लाने की क्या युक्ति है? हमारे जो मायावी संस्कार हमें अपनी ओर खींचते हैं, उनको हम कैसे हटायें? ईश्वरीय स्मृति में जो आनन्द मिलता है और जो शक्ति प्राप्त होती है, उसका स्थायी अनुभव हम पायें कैसे? हमारे इन विकल्पों का कारण और उसका निवारण क्या है?"

बात यह है कि मन को जो अपनी पुरानी टेव पड़ी हुई है, वह तो उसी के अनुसार ही चलता है। अब उसे ईश्वर की ओर लगाने के लिए तीन मुख्य बातों का ख्याल रखना चाहिए। एक तो यह कि वे मायावी विकल्प तभी तक आयेंगे जब तक स्वयं को इस लोक का वासी समझेंगे। अतः युक्ति यह है कि आप इस निश्चय में टिकें कि – "मैं आत्मा परमधाम का निवासी हूँ अथवा, मैं परमधाम से इस सृष्टि मंच पर कुछ पार्ट बजाने आया हूँ। बस, मुझे तो अब शीघ्र ही यहाँ से लौटकर उस ज्योति लोक में, उस शान्ति धाम में, उस पवित्र पुरी में अथवा उस प्रभु के देश में लौट जाना है। यह माया नगरी मेरी नगरी नहीं है, यह तो परदेश है।" जब परमधाम अथवा परलोक की स्मृति में रहेंगे तो स्थिति भी पारलौकिक अथवा अलौकिक हो जायेगी और इस कलियुगी मायावी संसार के विकल्प मन को नहीं सतायेंगे। इसलिए हमने योगी और भोगी का अन्तर बताते हुए ही कहा है कि योगी की एक आँख मुक्ति-धाम पर और एक जीवन्मुक्ति धाम पर टिकी रहती है अथवा योगी परमधाम की ओर चलता है।

दूसरी बात यह है कि मनुष्य का जिस प्रकार का चिन्तन सारे दिन में चलता है वैसे ही संकल्प, योग का विशेष अभ्यास करने के समय भी उसके मन में चला करते हैं। अतः इस बात की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है कि दिन में भी चलते-फिरते बार-बार योग का अभ्यास करते रहना चाहिये।

तीसरी एक आवश्यक बात यह है कि **मरजीवा** बनने के बिना योग में स्थिति प्राप्त करना लगभग असम्भव ही है। **'मरजीवा'** बनने का अर्थ है 'मर कर नया (आध्यात्मिक) जन्म लेना'। जब कोई मनुष्य मरता और दूसरे स्थान पर जन्म लेता है तो उसे पूर्व जन्म की सभी बातें भूल जाती हैं और अब नये सम्बन्धियों से उसका नया नाता जुड़ता है। इसी प्रकार, अब अपने विकारी और अज्ञान-काल के कृत्यों को भुलाकर, अपने दैहिक नातेदारों की ममता को भी छोड़कर परमपिता परमात्मा से याद का नाता जोड़ना ही 'मरजीवा जन्म' लेना है। ऐसा मरजीवा जन्म योगाभ्यास के लिए आवश्यक है।

योगाकांक्षी के लिए "बीती सो बीती देखो, दुनिया न जीती देखो," ऐसा दृष्टिकोण आवश्यक है। इससे उसका मन अनासक्त हो जाएगा। भले ही वह संसार में कार्य-व्यवहार करेगा और गृहस्थ व्यवहार निभायेगा, परन्तु उसे इनमें कोई रस नहीं आयेगा बल्कि वह स्वयं को परमपिता परमात्मा ही का एक छोटा-सा और भोला-सा बच्चा मानते हुए सरल स्वभाव से, ब्रह्मचर्य-व्रत में, आत्मिक दृष्टि को लेकर चलेगा और योगावस्था में आनन्द की अनुभूति करेगा।

दिवास: आध्यात्मिक प्रदर्शनी के उद्घाटन के पश्चात् आर.बी. गुप्त जी को चित्रों की व्याख्या देते हुए ब्र.कु. उमिंला जी।

बेहरामपुर: दशहरा के पर्व पर 'सर्व आत्माओं के पिता शिव' की झाकी का दृश्य।

व्यसनों से छुटकारा

ले.-ब्रह्माकुमारी चक्रधारी, दिल्ली

कलियुग का एक लक्षण यह है कि मनुष्य का व्यवहार और आचार भ्रष्ट होने के साथ-साथ उसका आहार भी भ्रष्ट हो जाता है। इन्द्रियों पर नियंत्रण न रहने अथवा जिह्वा का गुलाम बन जाने के कारण वह अभक्ष्य का भक्षण और अपेय का पान करता है। परिणाम यह होता है कि 'जैसा अन्न वैसा मन' की उक्ति के अनुसार उसका मन भी दूषित हो जाता है। फिर बात वहाँ तक भी नहीं थमती; वह दुर्व्यसनों का भी शिकार हो जाता है। आज ऐसे युवकों और युवतियों की संख्या बढ़ती ही जा रही है जो नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं और अब उनके ऐसे चंगुल में आ गए हैं कि उससे उनका छूटना भी मुश्किल हो गया है।

इसी प्रसंग में एक छोटी-सी कहानी याद आती है। बात कोई बहुत ज्यादा पुरानी नहीं, इसी शताब्दी के प्रारम्भ की है। एक राजकुमार दुर्व्यसनों में फंस गया था। राजा को चिन्ता हुई कि यह राजकाज कैसे चलाएगा। उसने बहुत तरीके से राजकुमार को समझाने की समय-समय पर कोशिश की। परन्तु राजकुमार को हुक्का और शराब पीने की ऐसी पक्की आदत पड़ गई थी कि वह राज्य भाग्य छोड़ सकता था परन्तु उनको छोड़ने को तैयार नहीं था। राजकुमार की माता, रानी साहिबा ने भी बहुत कोशिश कर ली परन्तु वह मानता ही नहीं था। रानी साहिबा ने माँ की ममता से, वात्सल्य भाव से, हुज्जत से, नाराजगी जाहिर करके, खाना छोड़कर, धमकी देकर अर्थात् सब तरीके अपना कर देख लिया परन्तु उस कँवर को इल्लत ऐसी पड़ गई थी कि चिलम व हुक्का और शराब मद्य उसके मुँह के साथ लगे रहते थे। बहुत ज्यादा कहने कहलवाने से पहले तो वह कभी-कभी एक-आध दिन के लिए भी छोड़ देता था परन्तु अब तो वह पक्का ढीठ बन गया था कि किसी के कहने का उस पर कुछ असर ही नहीं होता था। जैसे चिकने घड़े पर पानी डालो तो वह पानी उससे लगा नहीं रहता बल्कि फिसल कर गिर जाता है वैसे ही अब उसकी बुद्धि चिकने घड़े के ही समान थी जिस पर ज्ञान रूपी जल टिकता ही न था।

एक दिन उस राजा के पास एक योगी आये। राजा ने सोचा कि ये तो तपस्वी हैं, परोपकारी हैं, इनसे ही अनुनय विनय करके देखूं, शायद इनके प्रताप से राजकुमार सीधे रास्ते पर आ जाये। उसने सोचा कि कोशिश करने में हर्ज ही क्या है?

राजा ने कहा—"योगी जी महाराज, आपने अपना जीवन तो धन्य बना लिया परन्तु आपका यह दास एक बात के कारण सदा चिन्तित रहता है। ये चिन्ता इसे घुन की तरह खाये जा रही है। अगर आपकी आज्ञा हो तो मन का कुछ हाल बताऊँ।"

योगी जी बोले—"राजन, संकोच किस बात का है? हमें न बताओगे तो और किसको बताओगे। अगर हमसे आप की यह समस्या हल हो सकती होगी तो हम अवश्य कोशिश करेंगे। तुम्हें दुख किस बात का है? प्रजा तुमसे खुश है, मन्त्री वफादार है, रानी भी सुशील है, मालूम होता है कि खजाने भी तुम्हारे भरपूर हैं। पड़ोसी राजाओं से तुम्हारे सम्बन्ध भी अच्छे हैं कि किसी प्रकार के आक्रमण का कोई भय नहीं। तुम्हारे अपने चरित्र के कारण अपराध भी अधिक नहीं होते। देखने में कोई व्याधि भी तुम्हें घेरे हुए नहीं लगती तो फिर चिन्ता किस बात की है"

राजा बोला—"महाराज, यह सब तो ठीक है। प्रभु की कृपा है। आपकी दया-दृष्टि है, बड़ों का आशीर्वाद है और प्रजा का स्नेह है। परन्तु इस राज्य का जो उत्तराधिकारी है, वह व्यसनों की दलदल में बुरी तरह फस चुका है। सोने-चाँदी के धागों से मढ़े हुए, रत्नों से जड़े हुए हुक्कों में तम्बाकू डालकर उसे गुटर-गुटर करने में ऐसा मजा आता है कि अब छोड़ने का नाम ही नहीं लेता। इसी तरह सुन्दर-सुन्दर प्यालों में शराब डालकर उसे दोस्तों की सोहबत में पानी से भी ज्यादा ऐसा पीता है कि होश गँवा कर पड़ा रहता है। बस महाराज, मेरी यही बदनसीबी है। रानी साहिबा भी इसी दुख से मायूस रहती है। आप ही सोचिए, महाराज, अगर किसी की सन्तान ऐसी हो तो उसको जीवन कैसा बोझिल लगेगा। इसका कोई उपाय आप ही कर सकते हैं। महाराज, क्योंकि पहले तो वह हमारी बात को सुनकर अनसुनी कर देता था परन्तु अब तो वह सुनने को भी तैयार नहीं होता। कुछ कृपा कीजिए महाराज वर्ना यह सारा राज्य छिन्न-भिन्न हो जाएगा और प्रजा में भी ये बुरी आदतें फैल जाएंगी।

योगी जी बोले—"चिन्ता न करो राजन्। इसका कुछ उपाय किया जाएगा। अगर राजकुमार कहीं नजदीक हो तो क्या वह इस समय यहाँ आ सकता है?"

राजा—"वह आ जाएगा महाराज—मैं ऐसा समझता हूँ।" फिर मन्त्री को सम्बोधित करते हुए राजा बोला—"मन्त्री जी, राजकुमार को यहाँ आमन्त्रित किया जाए।"

शीघ्र ही वहाँ राजकुमार आ उपस्थित हुआ। उसने योगी जी को प्रणाम किया और आसन ग्रहण करने के बाद वह योगी जी की ओर देख ही रहा था कि राजा बोला—"महाराज, ये हैं राजकुमार। इन पर आपकी ऐसी कृपा हो कि यह हुक्का और शराब पीना छोड़ दे। इसके अलावा तो इनमें सब अच्छी आदतें हैं महाराज....।"

राजा कुछ कहना ही चाहते थे कि योगी जी पहले राजा की ओर देखते हुए बोले—"आशा रखो, सब ठीक हो जाएगा।" और फिर राजकुमार की ओर देखते हुए बोले—"कुँवर जी, हुक्का और शराब पहले से भी दुगना पिया करो।" यह कहकर वे मुस्कुरा दिये परन्तु कुँवर एक ओर तो खुश हुआ कि उसे अब मन-इच्छित वस्तु का प्रयोग करने की छुट्टी स्वयं राजा के सामने योगी राज ने दे दी है परन्तु दूसरी ओर उसके मन में अचम्भा हुआ और यह जानने की उत्सुकता हुई कि योगी जी ने दुगना पीने की कैसे आज्ञा दे दी।

उसी समय योगी जी तो उठकर चल दिये और राजा यह सुनकर शान्त रहा कि योगी जी के इस कथन के पीछे कोई रहस्य होगा।

दूसरे दिन राजकुमार स्वयं ही उत्सुकतावश योगी जी के पास गया और बोला—महाराज, आप तो अद्भुत योगी हैं। आजतक जितने भी महात्मा इस राजमहल में आते रहे, सबने तो मुझे व्यसनों को छोड़ने के लिए कहा परन्तु आप ही ऐसे महान् पुरुष हैं कि जिन्होंने यह कहा कि दुगनी मात्रा में पियो। महाराज, इजाजत हो तो एक बात पूछूं। दुगना पीने से क्या लाभ होगा?

योगी जी बोले—"इससे तीन लाभ होंगे। पहला यह लाभ होगा कि चोर नहीं आयेंगे। दूसरा यह लाभ होगा कि लोगों को शरीर सुडौल दिखाई देगा और तीसरा यह लाभ होगा कि सदा सवारी मिलेगी।" यह कहकर वे मुस्कुराने लगे परन्तु इससे राजकुमार का आश्चर्य और भी बढ़ा।

राजकुमार बोला—महाराज,वो कैसे?

योगी—देखो, तम्बाकू पीने वाले को खाँसी, दमा आदि हो जाता है, और जो रात को खाँसता रहेगा तब चोर अगर आया भी होगा तो भाग जाएगा। दूसरे, जो बार-बार खाँसेगा, उसके पुट्ठे भी बाहर निकल आएंगे और लोगों को देखने में तो वह सुडौल ही लगेगा चाहे उसे स्वयं को बहुत तकलीफ हो रही हो। तीसरे, शराब और तम्बाकू सेवन का परिणाम यह होगा कि जोड़ों में कमजोरी हो जाएगी और बिना सवारी के चलना मुश्किल होगा। इसलिए मैंने कहा कि सदा सवारी मिलेगी। यह कहते हुए योगी जी फिर से मुस्कुराने लगा। वह राजकुमार तो बहुत हंसने लगा।

राजकुमार बोला—महाराज, आप तो बहुत रमणीक हैं। आप तो मुझे इसके फायदे बता रहे थे और दुगना पीने को कह रहे थे परन्तु अब मैं इनके नुकसान को समझा। आपने मेरे सम्मान को ठेस न पहुँचाते हुए बड़ी युक्ति से बात मुझे ऐसे बता दी कि मैं रुचि से सुनता रहा और अब तो यह मुझे ऐसी लग गई है कि मैं आप से पक्का वचन करता हूँ कि न कभी इन्हें हाथ लगाऊंगा न मुँह लगाऊंगा।

इस प्रकार योगी जी ने युक्ति से राजकुमार को व्यसनों से मुक्ति दिला दी। ऐसे ही शिव बाबा और ब्रहमा बाबा भी बहुत ही युक्ति-निपुण हैं। वे हम बच्चों के सम्मान को ठेस न पहुँचाते हुए बड़ी रमणीकता और युक्ति से हमें बुरी आदतों से मुक्ति दिला देते हैं। मन की कलुषित भावनाओं को वा निजी निर्णय जो ले चुके होते हैं उन सबको एक तरफ रख उत्सुकता से और जानने की जिज्ञासा से अगर कोई बात सुनी जाए तो वह जीवन को श्रेष्ठ तथा सत्य दिशा निर्देश कर उच्च आसन आसीन कर सकती है।

लातूर: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम [redacted] ब्र.कु. महादेवी, जिलाधीश भ्राता सारंगी जी, उनकी धर्मप[redacted]था जिला परिषद के मुख्य अधिकारी शिव बाबा की याद में बैठे हैं।

गुलबर्गा: 'सर्व के स[redacted]ग से सुखमय संसार' [redacted] का उद्घाटन दृश्य। भ्राता के. [redacted]लिङ्गम-उपाय[redacted] ब्र.कु. प्रेम, भ्राता चन्द्रशे[redacted]उपकुलपति गुलबर्गा विश्वविद्यालय दीप प्रज्ज्वलित करते हुए।

अज्ञानी का ईश्वर से भय और ज्ञानी का ईश्वर से भय

अज्ञानवश भय रखने में और ज्ञानयुक्त होकर भय रखने में अन्तर होता है। अंधश्रद्धा के आधार पर ईश्वर से भय रखना बात अलग है और यथार्थ रूप से ईश्वर का परिचय प्राप्त कर भय रखना बात अलग है। यहां अज्ञानी से मतलब उसका जो स्वयं को नहीं जानता, ईश्वर को यथार्थ और सही रूप से नहीं जानता, कर्मों की गुह्य गति को नहीं जानता, दण्ड के रहस्य को सही मायने में नहीं जानता। इसके विपरीत ज्ञानी वह जो इन सब ईश्वरीय रहस्यों को जान और समझ चुका है। इसी अर्थ में ज्ञानी और अज्ञानी शब्दों का प्रयोग इस लेख में किया जा रहा है। अज्ञानी आमतौर पर कहते सुना जाता है कि भगवान से हमें डर है अथवा दूसरों से कहता है कि क्या तुमको भगवान से डर नहीं लगता, अरे खुदा से तो डरो, आदि। कोई अहंकारी यह भी कहते सुना जाता है अरे, भगवान से क्या डरना, भगवान है कहां, हमको तो कुकर्मों से डरना चाहिए अथवा कोई कहता मेरा तो भगवान भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तो ये सब अज्ञानियों या मिथ्या ज्ञानियों के बोल हुए। यथार्थ ज्ञानी जिसे अहंकार नहीं है उसके ऐसे बोल नहीं होंगे।

वास्तव में ईश्वर और कर्म फिलासाफी के विषय में गलतफहमी होने के कारण ऐसे बोल निकलते हैं। ईश्वरवादी लोग ऐसी मान्यता लेकर चलते हैं कि यदि ईश्वर उनसे नाराज हो जाये तो वह हमारा अनिष्ट कर देगा। किंतु यह मान्यता सत्य नहीं है। इस प्रकार की मान्यता शास्त्रों और पौराणिक कथाओं के आधार पर मनुष्यों ने बना ली है। उदाहरणार्थ स्कंद पुराण के रेवा खण्ड में जिसमें सत्यनारायण की व्रत कथा का वर्णन है उसमें यह प्रसंग आता है कि जब वैश्य ने सत्यनारायण व्रत करने का संकल्प करने के बाद भी अपने वचन को नहीं निभाया तो भगवान ने रूष्ट होकर उसे श्राप दिया कि उस पर दुख आये और कहा कि "मेरी इच्छा से ही तुम पर दुख आता है।" वास्तव में देखा जाये तो ये सब बातें भगवान के स्वरूप एवं स्वभाव के विपरीत हैं। भगवान तो कल्याणकारी, सुखकर्ता, दुखहर्ता हैं। वह किसी का अहित कैसे कर सकता, किसी को अपनी इच्छा से दुख कैसे दे सकता। वास्तव में दुख मनुष्यों को अपने ही बुरे कर्मों से, पाप कर्मों के कारण प्राप्त होता है। उसमें भगवान का हाथ कैसे हो सकता? भगवान तो पाप-कर्म करने की प्रेरणा नहीं दे सकता। वह तो पाप-पुण्य की गति समझाता है ताकि मनुष्य दुख से मुक्त हो। वह श्रेष्ठ कर्म करने की शिक्षा देने वाला परमशिक्षक है।

उपरोक्त विवेचना से निष्कर्ष यह निकला कि मनुष्यों को डरना ही है तो अपने बुरे कर्मों से, पाप-कर्मों से। कर्मों की गुह्य गति ठीक से समझे बिना यूं ही भगवान से डरने अथवा ना डरने का कोई अर्थ नहीं होता, ना कोई परिणाम निकलता। जो विकर्मों (पाप-कर्मों) से डरता है, जिन्हें विकारों के आक्रमण का डर होता है, जो ईश्वरीय आज्ञाओं और श्रीमत् की अवज्ञा से डरता है, वास्तव में हम कह सकते हैं कि वही सही मायने में ईश्वर से डरता है। ईश्वरीय कानूनों से डरना माना ही ईश्वर से डरना। जिसे यही पता नहीं कि ईश्वरीय कानून क्या हैं, वह ईश्वर से क्या डरेगा।

धर्मराज के डण्डों का भय ही मनुष्यों को बुरे कर्मों से बचा सकता है। मनुष्य जानते हैं कि भगवान के दरबार में दण्ड मिलेगा। किंतु यह भी तो जानना जरूरी है कि वे कौन से ईश्वरीय कानून हैं जिनको तोड़ने से दण्ड मिलता है। कानून तोड़ने से दण्ड मिलता है यह तो सब जानते हैं। किंतु कानून का पता भी तो हो। तो ईश्वरीय कानून, ईश्वरीय मर्यादाएं जानने वाला और उन पर अमल करने वाला सब भयों से छूट जाता है, उसके बोल ऐसे नहीं होंगे कि "मुझे ईश्वर से डर लगता है।" कई ईश्वर से भय रखने वाले जिसे लोग भक्त कहते हैं, वे दुख पाते रहते हैं। क्यों? क्योंकि वे ईश्वरीय आज्ञाओं को, कर्म फिलासाफी को सही अर्थ में नहीं जानते।

अतः यह जानना आवश्यक है कि मैं कौन हूं, भगवान किसे कह सकते हैं, भगवान कौन-सी आज्ञाएं देता है, उसकी श्रीमत् क्या है, श्रीमत् की अवज्ञा का अंजाम क्या होता है, श्रीमत् पर चलने से क्या लाभ होता है आदि। इन सब बातों का जिसे ज्ञान है उसका भय ईश्वर प्रति यथार्थ भय अथवा शुद्ध भय कहा जा सकता है। अज्ञानी का भय अशुद्ध होता है, उस भय को मनोविकार कह सकते हैं जो दुष्परिणामी होता है।

पाप-कर्मों की सजा ईश्वर नहीं देता बल्कि ईश्वरीय कानून देता है। इस बात को हम इस तरह स्पष्ट करेंगे। जैसे लौकिक में आमतौर से सुना जाता है कि फलाने मजिस्ट्रेट ने फलाने को फलाने अपराध के लिए सजा दी। वास्तव में सजा मजिस्ट्रेट नहीं देता वह तो कानून को क्रियान्वित करता है, वह भी कानून से बंधा होता है। कानून मजिस्ट्रेट को बताता है कि फलाने अपराध के लिए फलानी सजा दी जावे, तदनुसार वह सजा देता है। तो मजिस्ट्रेट एक माध्यम हुआ जिसके माध्यम से कानून की आज्ञा का पालन किया गया। यही बात ईश्वर और ईश्वरीय कानूनों को लागू होती है, किंतु आम मान्यता अनुसार कह दिया जाता है कि सजा भगवान ने दी।

(शेष १७ पृष्ठ पर)

ईश्वरीय ज्ञान की विशेषतायें

ले. ब्र.कु. सुधा, शक्तिनगर, दिल्ली

शिव बाबा ने प्रजापिता ब्रह्मा के मुखारविन्द से जिस ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग की शिक्षा दी है, वह सचमुच एक कमाल ही है। कई लोग उसे जादू कहते हैं परन्तु वास्तव में उसे कहना चाहिए–'कमाल' अथवा 'आद्भुव्य' (Wonderful), 'आश्चर्यचकित' (Miraculous) अथवा 'क्रान्तिकारी' (Revolutionary)। इस ज्ञान और योग को ये विशेषण देने के कई कारण और उदाहरण हैं परन्तु इस छोटे-से लेख में हम संक्षेप और सार में इस विषय में एक-दो ही बातें कहेंगे।

पहली बात तो यह है कि आज तक बड़े-बड़े दार्शनिक, चिन्तक, विचारक और मनीषी इस विषय पर चिन्तन एवं शोध करते रहे कि मन क्या है? आत्मा का क्या स्वरूप है? जगत सत्य है या मिथ्या है और क्या इसका कोई आदि और अन्त है? इस स्थूल जगत के अलावा भी कोई सृष्टि है या नहीं? क्या इस सृष्टि को किसी ने रचा? उस रचयिता का क्या स्वरूप है? इत्यादि, इत्यादि। जिन्होंने इस पर चिन्तन किया, उन्हें ऋषि मुनि की उपाधि मिली या वे दार्शनिक कहलाये और उन्हें दर्शन शास्त्री, दर्शनाचार्य या डाक्टरेट (Doctorate) इत्यादि की बड़ी-बड़ी उपाधियाँ मिलीं। उनकी लिखी पुस्तकों का एक पहाड़-सा बन गया जिन्हें पढ़ने और समझने के लिए भी विशेष भाषा ज्ञान, व्याकरण-बोध, स्मरण प्रतिभा और न जाने क्या-क्या चहिए। फिर इन विषयों का केवल दार्शनिक ही चिन्तन या उल्लेख नहीं करते बल्कि खगोल विज्ञान (Astronomy or Astrophysics) तथा अन्य कई विज्ञान भी अरबों डॉलर खर्च करके इन पर बड़े-बड़े ग्रन्थ रचते हैं। इस सारे साहित्य को एक जन्म तो छोड़ो, कई जन्मों में भी नहीं पढ़ा जा सकता। इस पर भी इन सभी में मतैक्य नहीं और यह नया शोध कार्य होने के बाद बदलते भी रहते हैं। परन्तु बाबा के ज्ञान का कमाल यह है कि एक सप्ताह में एक निरक्षर व्यक्ति भी एक करोड़ किताबों के सार को सुनिश्चित (Clear) रूप से समझ लेता है और प्रायः यह सार अभी तक मानवी शोध द्वारा जाने हुए ज्ञान और विज्ञान से भिन्न है परन्तु विवेक सम्मत और अनुभव गम्य होता है। अतः जो कुछ अनेक जन्मों में करोड़ों रुपये खर्च करने पर भी नहीं जाना जा सकता उसे सहज ही रट्टा लगाने की मुसीबत के बिना सरल और सरस तरीके से एक सप्ताह में जान लेना–यह कमाल नहीं तो क्या है?

बात केवल जानने तक सीमित नहीं है। केवल जान लेने से तो मनुष्य विद्वान अथवा पण्डित बन जाता है। परन्तु जैसे कहा गया है कि 'पैसा वह जो काम आये', 'मित्र वह जो सहायता करे', इसी प्रकार ज्ञान वह जो मनुष्य के व्यवहार को आलोकित करे, संस्कार को शुद्ध बनाये, आचार को सदाचार का रूप दे और जीवन में शान्ति का रस भर दे। जो ज्ञान यह कार्य नहीं करता, वह तो भार-रूप है, उससे तो दिमाग में खुश्की ही पैदा होगी। जैसे कहा गया है कि 'जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले', ऐसे ही ज्ञान वह है जो प्रत्यक्ष फल दे अर्थात जीवन में प्रत्यक्ष सुगन्धि भर दे। जादूगर जैसे गमले में लोगों के सामने आम की गुठली डाल देता है और रुमाल से ढक देता है और कुछ देर के बाद दिखा देता है कि कैसे पौधा उग आया है और लोग हैरान होकर कहते हैं कि कमाल है! कोई कहता है कि यह जादूगर की जादूगरी है, अन्य कोई कहता है कि यह हाथ की सफाई है, तीसरा कोई कुछ कहता तो नहीं बल्कि होठों पर अँगुली रखे हुए, आँखें बहुत खुली करके, भौंचक्के चेहरे से आश्चर्य की न्यायीं उसे देखता है। ऐसा ही तो ईश्वरीय ज्ञान है जो एक सप्ताह में मनुष्य के काँटे-जैसे जीवन को फूल जैसा बना देता है और मानव के मन में ज्ञान के बीज बोते ही उसमें दिव्य गुणों रूपी पुष्प उगना और खिलना शुरू हो जाते हैं और शीघ्र ही उसमें सेवा का मेवा अथवा पुरुषार्थ का प्रत्यक्ष फल स्पष्ट दीखने लग जाता है और लोग सोचते हैं कि जो कार्य ऋषि लोग जंगलों में रहकर नहीं कर सके, वह कार्य इन नगरों, महानगरों के दूषित वातावरण में रहने वाले घोर कलियुग के इस काल में इन सामान्य जनों ने कैसे कर लिया! यह बात उनकी समझ में नहीं आती अर्थात उन्हें आश्चर्य की न्यायीं प्रतीत होती है। यही तो कमाल है!

लोग कहते हैं कि युवावस्था में पति और पत्नि इकट्ठे रह कर वैसे ही पवित्र नहीं रह सकते जैसे कि कपास आग के पास होने से जले बिना नहीं रह सकती। वे यहां तक भी कहते हैं कि स्वयं ऋषि मुनि तप करने के बावजूद भी पवित्र नहीं रह सके–आज के युवकों और युवतियों की तो बात ही क्या है? परन्तु शिव बाबा द्वारा सिखाया गया सहज योग ही ऐसा है कि जीवन में सहज ही पवित्रता धारण हो जाती है। आत्मा का स्पष्ट ज्ञान होने से जीवन में आत्मनिष्ठ होने के फलस्वरूप देह-दृष्टि ही नहीं रहती तो फिर युवा और वृद्ध का भान ही

अहिंसा-युक्त देव पद प्राप्त करना है तो उसका पुरुषार्थ, कहां पैदा होता है। जब जीवन में लक्ष्य का सही ज्ञान मिल जाता है तो लक्ष्य के अनुरूप लक्षण स्वतः ही आना शुरू हो जाते हैं। जब मनुष्य समझ लेता है कि मनुष्य से देवता बनना है और कि दिव्य गुणों के बिना मानव,मानव नहीं, असुर है और स्वयं ही अपने आसुरी कर्मों से दःख के बीज बोता है तो फिर भला क्यों नहीं जीवन में दिव्य गुण आने लगेंगे? जिसका लक्ष्य एक्टर या एक्टरैस बनने का हो, वह बातचीत ही एक्टर्स की तरह करते हैं और उनके हाव-भाव और रंग-ढंग भी वैसे ही होने लगते हैं। जिसे मिलिट्री में भर्ती होने का शौक हो, उसे मिलिट्री की युनिफार्म (वर्दी), पिस्तौल, रिवाल्वर और स्टार व मैडल आदि की सजावट अपनी ओर आकर्षित करती है और वह साहस और वीरता ही के काम करने का अभ्यास करता है; और शारीरिक क्षमता को बढ़ाने पर ध्यान देता है। इसी प्रकार जिसे यह स्पष्ट लक्ष्य मिल जाता है कि सर्वगुण सम्पन्न, १६ कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी तथा उत्तम मर्यादा और उसकी धारणा, उसकी स्थिति, उसकी चाल-ढाल, उसके गुण भी वैसे ही बन जाते हैं। जिनका कोई लक्ष्य ही नहीं, वे तो भटक रहे हैं (They are beating about the bush) क्योंकि उनका कोई गन्तव्य स्थान कोई मंजिल (goal), कोई ठिकाना ही नहीं। अतः जब शिव बाबा ने हमें बुद्धि का ठिकाना दे दिया, जब मन को मंजिल मिल गई, तब यह स्वाभाविक ही है कि भटकना बन्द हो गया और शान्ति मिल गई। इसका फल यह हुआ कि कल तक जिनका जीवन निकम्मा और नाकारा था, आज उनमें दैवी लक्षण प्रगट होने लगे, उनके जीवन में शान्ति का सार आ गया; उनके मन को मंजिल मिल गई, उम्मीदें भर आईं, चेहरों पर खुशी उभर आई और वे सफलता के चमकते हुए सितारे बन गये। जिनको लोग कल तक बेकार समझते थे, न केवल उनके अपने जीवन में सफलता साकार हो गई बल्कि वे औरों के जीवन को भी व्यर्थ से समर्थ और निकृष्ट से श्रेष्ठ बनाने का साधन बन गए—यह है ईश्वरीय ज्ञान और योग की एक कमाल!

(पृष्ठ १५ का शेष)

अज्ञानी का ईश्वर से भय और ज्ञानी का-

विकारों के प्रभाव में आकर जो कर्म होते हैं वे पाप-कर्म अथवा विकर्म कहे जाते हैं। इस प्रकार पापों का बोझा जो मनुष्यों के सिर पर है वह या तो योगाग्नि से भस्म हो सकता है अथवा दण्ड के द्वारा उतारा जा सकता है। किसी भी तरह से पाप कटने के बाद ही मनुष्य को मुक्ति की अवस्था प्राप्त हो सकती है। इसलिये ईश्वर ने ये दो विकल्प मनुष्य को बताये हैं। अतः ईश्वर, मुक्ति का मार्ग बताता है, उपाय बताता है। कौन-सा उपाय अपनाना यह मनुष्य के विवेक पर निर्भर करता है। योगाग्नि से पाप भस्म कर मुक्ति प्राप्त करना ही श्रेयस्कर है। इसलिये मनुष्य को चाहिये कि भगवान द्वारा सिखाये राजयोग से अपने संचित पापों को काटे और यह सावधानी बरते कि आयंदा उन पापों में वृद्धि न हो, इसी में उसका कल्याण है। अन्यथा ईश्वरीय नियमों के मुताबिक दण्ड भुगतना ही पड़ेगा।

ले. ब्र.कु. व्ही.जे. वराडपांडे
डिस्ट्रिक एंड सेशंस जज, दमोह

कृष्णगिरि सेवाकेंद्र पर रखे गए पत्रकार स्नेहमिलन के पश्चात् कुछ समाचार पत्रों के प्रतिनिधि ब्र.कु. बहनों के साथ।

रांची: दुर्गा पूजा के अवसर पर चैतन्य दुर्गा की झांकी एवं आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के पश्चात् 'रांची एक्सप्रैस' दैनिक समाचार पत्र के प्रबंध निदेशक भ्राता सीताराम मारू जी ब्र.कु. निर्मला व शीला के साथ खड़े हैं।

गुरु-प्रथा

गुरुओं से संसार को लाभ अधिक हुआ है या हानि अधिक हुई है और मनुष्य को गुरु की आवश्यकता भी है या नहीं, इसके बारे में दो विचार प्रचलित हैं। भारत जैसे धर्म-प्रधान देश में भी काफी संख्या में ऐसे लोग हैं जो गुरुडम (Gurudom) के विरुद्ध हैं। दूसरी ओर ऐसे लोगों की संख्या भी कम नहीं है जो गुरु को अत्यन्त आवश्यक मानते हैं और गुरुओं का बहुत सम्मान करते हैं। वे पिता और शिक्षक से भी गुरु का दर्जा ऊँचा मानते हैं। उनकी यह धारणा है कि गुरु ही मनुष्य को इस संसार से पार लगाने का कर्तव्य करता है। अतः वे समझते हैं कि हरएक मनुष्य के लिये यह आवश्यक है कि वह किसी-न-किसी गुरु से मार्ग-प्रदर्शना ले। कई घरानों में यह भी रिवाज है कि वे अपनी सन्तति को बाल्यावस्था में ही किसी गुरु के पास ले जाते हैं ताकि गुरुजी उनके बच्चों को अपना शिष्य स्वीकार कर लें। इन लोगों की यह धारणा है कि जिस व्यक्ति का कोई गुरु होता है, उसकी अकाल मृत्यु नहीं होती और यदि किसी कारण से मृत्यु हो भी जाये तो दुर्गति नहीं होती। इसलिये यहां भारत में कहावत प्रसिद्ध है कि 'गुरु बिना मनुष्य की गति नहीं होती'। दूसरी ओर जो गुरु-प्रथा के विरुद्ध हैं उनकी यह मान्यता है कि गुरुओं के यहाँ केवल अन्ध-श्रद्धालु लोग ही जाते हैं। वे समझते हैं कि गुरु भोले-भाले नर-नारियों को जाल में फँसाकर मौज उड़ाते हैं। अतः अब प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य के लिये गुरु की आवश्यकता है या नहीं? दूसरी बात यह है कि यदि आवश्यकता है तो उस गुरु की क्या पहचान है? अर्थात्, सच्चा गुरु कौन है? क्या एक मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य का गुरु हो सकता है?

गुरु की आवश्यकता

गुरु की शरण में जाने का उद्देश्य यही होता है कि मनुष्य उसकी मार्ग-प्रदर्शना और सहायता से **माया के बन्धन से छूट सके, योग-युक्त होकर पवित्रता, शान्ति और आनन्द को प्राप्त कर सके और अन्ते गति तथा सद्गति अर्थात् मुक्ति और जीवन्मुक्ति को प्राप्त कर सके।** निःसन्देह, इस लक्ष्य की सिद्धि के लिये किसी अनुभवी, समर्थ, योग्य एवं विज्ञ मार्गदर्शक की आवश्यकता भी है ताकि वह अपनी उच्च स्थिति से मनुष्य को ऊँचा उठा सके, उसे स्वरूप-स्थित होने में सहायता दे सके और संस्कारों को बदलने इत्यादि के कार्य में सहज मार्ग दर्शा सके तथा यथार्थ ज्ञान दे सके। परन्तु अब देखना यह है कि गुरु लोग इस कर्त्तव्य को कर सके हैं या नहीं? उन्होंने मनुष्य को मार्ग पर लगाया है या सन्मार्ग से भटकाया है? वे सहायक सिद्ध हुए हैं या बाधक?

इस बात का निर्णय करने के लिये हमें पाँच मुख्य बातों पर विचार करना होगा। एक तो हमें देखना होगा कि गुरु लोग अपने शिष्यों को जो **लक्ष्य** देते हैं वह सत्य और स्पष्ट होता है या नहीं? दूसरे, उस लक्ष्य की पूर्ति के लिये जो **ज्ञान** वे समझाते हैं वह ज्ञान भी युक्ति-युक्त, सरल और सम्पूर्ण होता है या नहीं? तीसरे, उस ज्ञान में स्थिति के लिये जो **योग, साधना** इत्यादि वे सिखाते हैं अथवा जो **मन्त्र** वे देते हैं, वह सब भी त्रुटि-रहित, सहज और युक्ति-युक्त है या नहीं? चौथे, **संसार के प्रति जो दृष्टिकोण** वे अपने शिष्यों को सुझाते हैं और पाँचवें, **व्यावहारिक जीवन** को पवित्र बनाने के लिए और मनुष्यों के पारस्परिक जीवन को **उच्च मर्यादा** में बाँधने के लिये जो उपदेश वे देते हैं, वे सहायक और लाभदायक हैं या नहीं? इन बातों पर विचार करके ही निर्णय हो सकता है कि गुरु, मार्गप्रदर्शक बनकर जो मार्ग दिखाते हैं, वह मार्ग भी ठीक है या नहीं?

१. गुरु सत्य और सपष्ट लक्ष्य देते हैं या नहीं?

पहले ही बताया जा चुका है कि मनुष्य गुरुओं के पास इसलिये जाता है कि वह (गुरु) उसे माया के बन्धन से छुड़ा सके और मुक्ति तथा जीवन्मुक्ति की प्राप्ति करा सके। परन्तु आप देखेंगे कि गुरु लोग मुक्ति और जीवन्मुक्ति के विषय में एकमत नहीं हैं। कई गुरु कहते हैं कि आत्मा का परमात्मा में लीन होना ही मुक्ति प्राप्त करना है। अन्य कई समझते हैं कि आत्मा अविनाशी है और, इसलिए वह परमात्मा में लीन नहीं होती बल्कि परमात्मा का सामीप्य प्राप्त करती है परन्तु वे भी यह नहीं बता सकते कि यदि आत्मा लीन नहीं होती तो मुक्त होने के बाद कहाँ जाती है। पुनश्च, कई लोग कहते हैं कि मुक्ति की अवस्था में आत्मा को पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है और अन्य कई कहते हैं कि मुक्ति में तो आत्मा का चैतन्यता का गुण भी प्रादुर्भाव नहीं होता और उसे न शान्ति का अनुभव होता है न अशान्ति का। इसी प्रकार, जीवन्मुक्ति के बारे में प्रायः गुरु लोग यही बताते हैं कि इसी जीवन में जब मनुष्य ज्ञान को प्राप्त करके अनासक्त स्वभाव से व्यवहार में बर्तता है तब वह 'जीवन्मुक्त' ही है। अन्य लोग समझते हैं कि वैकुण्ठ में सुख-शान्ति प्राप्त करना ही 'जीवन्मुक्ति' है और यही मनुष्य-जीवन का लक्ष्य है। **इस प्रकार जीवन के लक्ष्य**

के बारे में भी गुरुओं में एक मत नहीं है। मुक्ति और जीवन्मुक्ति का यथार्थ ज्ञान तो वह ही दे सकता है जो स्वयं सदा-मुक्त हो और जो वैकुण्ठ की स्थापना करने वाला हो। जो स्वयं ही बद्ध है, जो मुक्तिधाम में गया ही नहीं ;वह मुक्ति का क्या परिचय दे सकेगा और मुक्तिधाम जाने के लिये क्या मार्ग-प्रदर्शना कर सकेगा?

इस प्रकार आप देखेंगे कि भले ही **माया** के बन्धन से छूटने के लक्ष्य को लेकर मनुष्य गुरु के पास जाता है परन्तु माया के बारे में भी गुरुओं के विभिन्न मन्तव्य हैं। कई गुरु धन को ही माया मानते हैं। अन्य कई लोग प्रकृति को ही माया समझते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो माया को ईश्वर की ऐसी शक्ति समझते हैं, जिसके द्वारा ईश्वर ने इस सृष्टि को रचा और मनुष्य को भ्रम में डाला। अन्य कई लोग माया को ईश्वरीय शक्ति से भिन्न एक विरोधी शक्ति मानते हैं और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह माया से छुड़ाये। अतः जबकि वे माया को भी पूरी रीति से नहीं जानते तो वे माया से छुड़ाएंगे कैसे? गुरु तो स्वयं ही कहते हैं कि माया बड़ी दुस्तर है, उस पर विजय प्राप्त करना असम्भव है तो वह विजय कैसे दिलाएँगे?

पुनश्च, भले ही कई गुरु अपने शिष्यों को यह शिक्षा देते हैं कि मनुष्य को पवित्र बनना चाहिए और काम, क्रोध इत्यादि पाँचों विकार छोड़ने चाहिएँ परन्तु पवित्रता की भी पूर्ण अवस्था का क्या स्वरूप है और क्या पहले कभी कोई ऐसे व्यक्ति हुए भी हैं जो इन विकारों से पूर्ण मुक्त हों। ये आवश्यक बातें गुरु लोग नहीं बता सकते बल्कि गुरु लोग तो प्रायः यह कहते हैं कि घर-गृहस्थ में रहते हुए मनुष्य पूर्ण पवित्र बन ही नहीं सकता और कि सम्पूर्ण पवित्र तो देवता भी नहीं थे। गुरुओं के इस प्रचार के परिणामस्वरूप, मनुष्य पवित्र बनने का भी पुरुषार्थ ठीक प्रकार से नहीं कर पाता। जब तक मनुष्य की बुद्धि में लक्ष्य ही स्पष्ट न हो तब तक वह क्या पुरुषार्थ करेगा?

२. गुरुओं द्वारा दिया गया ज्ञान युक्ति-युक्त और सम्पूर्ण होता है या नहीं?

कहावत प्रसिद्ध है कि "ज्ञान बिना गति नहीं होती।" अतः मनुष्य गुरुओं के पास आत्मा, परमात्मा आदि-आदि के वास्तविक **ज्ञान** की प्राप्ति ही के उद्देश्य से जाते हैं। परन्तु आत्मा और परमात्मा के बारे में भी कोई कुछ बताता है और अन्य कोई कुछ और ही बताता है। कई गुरु कहते हैं कि आत्मा ही परमात्मा बन सकती है, अन्य कई कहते हैं कि आत्मा में परमात्मा व्यापक है परन्तु आत्मा स्वयं परमात्मा नहीं बन सकती। कई गुरु कहते हैं कि परमात्मा है ही नहीं बल्कि सब आत्माएं ही हैं। कई लोग परमात्मा को सर्वव्यापी मानते हैं। अन्य कई लोग परमात्मा को एक धाम का वासी मानते हैं और उसके अवतरण में भी विश्वास रखते हैं। इसी प्रकार सृष्टि के बारे में भी विभिन्न विचार हैं। कई गुरु कहते हैं कि यह मिथ्या है, अन्य कई कहते हैं कि यह सत्य है और परमात्मा इसका रचयिता है। कोई इसको अनादि मानता है और कोई इसका आदि भी मानता है। **उपर्युक्त से स्पष्ट है कि आत्मा, परमात्मा और जगत् के बारे में भी कोई गुरु युक्ति-युक्त, सम्पूर्ण और सरल ज्ञान नहीं दे सकता। इस सृष्टि रूपी रचना का आदि, मध्य और अन्त क्या है, इस विराट सृष्टि-लीला का रचयिता कौन है, मनुष्यात्मा के आवागमन का चक्कर कहाँ से शुरू हुआ, उससे पूर्व मनुष्यात्मा कहाँ और किस अवस्था में थी, इसका पतन कब से और कैसे शुरू हुआ और अब इसका कल्याण कैसे होगा और कल्याण अथवा सद्गति का क्या स्वरूप है, इन विषयों पर सन्तोषजनक ज्ञान कोई मनुष्य नहीं दे सकता क्योंकि मनुष्य स्वयं भी जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा हुआ है। सृष्टि-रूपी रचना का सत्य ज्ञान तो इसका रचयिता अर्थात् परमात्मा ही दे सकता है।**

३. योग-साधना, मन्त्र इत्यादि

जबकि गुरु लोग आत्मा और परमात्मा का वास्तविक परिचय ही नहीं दे सकते तो मुक्ति और जीवन्मुक्ति की प्राप्ति के लिए वास्तविक योग भी कैसे सिखला सकते हैं? मनुष्यात्मा के परमात्मा में लीन होने का तो लक्ष्य ही असम्भव और गलत है, इसलिए उस लक्ष्य का साधन भी गलत होना स्वाभाविक है। जबकि बहुत-से गुरु जगत् को ही मिथ्या मानते हैं और सुख को काक-विष्ठा के समान समझते हैं तो वे जगत्जीत और सुख-सम्पन्न बनाने वाले राजयोग की विधि भला कैसे सिखा सकते हैं?

लौकिक गुरु तो केवल भक्ति ही सिखलाते हैं। वे मनुष्य को यही शिक्षा देते हैं कि वह यज्ञ, तप, दान, प्रार्थना, सन्ध्या इत्यादि करे। परन्तु गीता में भगवान् के महावाक्य हैं कि-"मैं इन यज्ञ, तप इत्यादि साधनाओं से नहीं मिलता बल्कि मैं स्वयं ही अवतरित होकर सच्चा ज्ञान और योग सिखाता हूं और पहले भी यह योग मैंने ही सिखाया था।" लौकिक गुरु तो मनुष्य को परमात्मा या देवताओं की 'यादगारों' की यात्रा कराते हैं, वे मनुष्यात्मा को 'स्वयं' परमात्मा के और देवताओं के अव्यक्त

धाम में नहीं ले जाते ; इसलिए भगवान् के महावाक्य है कि हे वत्स, मैं ही तुम्हें वास्तविक योग द्वारा परमधाम ले चलूंगा।

लौकिक गुरु जो योगादि सिखाते हैं, वे योग कृत्रिम और कठिन होते हैं। **वे ब्रह्मतत्व के साथ योग लगाने की शिक्षा देते हैं परन्तु वास्तव में ब्रह्मतत्व तो परमात्मा का धाम है,** परमात्मा स्वयं तो उससे भिन्न उस धाम का **वासी** है। अतः परमात्मा के साथ योग न होने से मनुष्यात्मा को शक्ति नहीं मिलती और वह न अपने विकर्मों को दग्ध कर सकती है और न ही जीवन्मुक्ति रूपी वर्सा प्राप्त कर सकती है।

लौकिक गुरु मन्त्र को **रटना** सिखलाते हैं, वे मन्त्र के अर्थस्वरूप में **टिकना** नहीं सिखाते। बहुत-से गुरु तो अपने शिष्यों को 'शिवोऽहम्' का मन्त्र जपने की आज्ञा देते हैं। परन्तु वास्तव में 'शिव' तो कल्याणकारी, त्रिभुवनेश्वर, अमरनाथ, महाकालेश्वर परमपिता परमात्मा का गुणवाचक नाम है और 'शिव' की प्रतिमा की तो पूजा होती है। **इस बात से सिद्ध है कि लौकिक गुरु मनुष्यात्मा को परमपिता परमात्मा शिव के साथ योग-युक्त करने की बजाय, स्वयं को ही शिव बताते हुए, मनुष्यों को परमात्मा (शिव) से विमुख कर देते हैं और इस प्रकार उनका अकल्याण करते हैं।**

४-५. संसार और व्यवहार के प्रति दृष्टिकोण

लौकिक गुरुओं ने तो मनुष्य को पाठ पढ़ाया है कि "पति ही नारी का गुरु भी है और परमेश्वर भी है।" उनके इस पाठ के अनुसार तो घर-घर में गुरु विराजमान हैं, तब भला वे स्वयं गुरु अथवा परमेश्वर और साकार रूप में परमेश्वर कहलाने के अधिकारी कैसे हुए? दूसरी बात यह है कि घर-घर में गुरु एवं परमेश्वर होते हुए भी घर-घर में अशान्ति और दुर्गति की अवस्था क्यों है?

इसके अतिरिक्त, लौकिक गुरु यह भी मति देते हैं कि गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु हैं और गुरु ही साक्षात् महेश्वर हैं और गुरुओं के चरणों की रज भी मस्तक पर लगाने से चेला तर जाता है। वे कहते हैं कि गुरु तो ईश्वर से भी बड़ा है क्योंकि ईश्वर ने तो मनुष्य को इस माया-जाल में फँसाया है और गुरु उसको यहाँ से निकालने का शुभ कर्त्तव्य करता है। इस प्रकार की शिक्षा से तो उन्होंने मनुष्यमात्र को ईश्वर से हटाया है, मिलाया नहीं है।

सच्चा गुरु एक परमात्मा है

अतः यह याद रहे कि 'योग और क्षेम' देने वाला 'नष्टो मोहः' और 'स्मृर्तिलब्धा' करने वाला, 'स्वर्ग का राज्य-भाग्य' दिलाने वाला, 'श्री (देवपद) और विजय' (विकारों पर जय) प्राप्त कराने वाला गुरु तो केवल 'शिव' परमात्मा ही है। गीता इस बात की साक्षी है कि भगवान् स्वयं अवतरित होकर ज्ञान तथा योग सिखाते और मनुष्यों का उद्धार करते हैं। साधुओं और गुरुओं का परित्राण भी भगवान् ही करते हैं।

अम्बाला छावनी: *'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के अन्तर्गत हुए पत्रकार गोष्टी के पश्चात् विभिन्न समाचार पत्रों के प्रतिनिधि ब्र.कु. कृष्णा तथा आशा के साथ दिखाई दे रहे हैं।*

"उतार-चढ़ाव जीवन की सुन्दरता है"

ब्र.कु.उर्मिला, चण्डीगढ़

अनादि अविनाशी सृष्टि चक्र के वर्तमान काल में हम सभी ब्राह्मण उस सीट पर विराजमान हैं जहाँ बैठकर वर्तमान के साथ-साथ भूतकाल (Past) और भविष्यकाल (Future) को भी देख रहे हैं। दूसरे शब्दों में विभिन्न युगों में हमारे द्वारा किए गए कर्मों और उनसे दुःख या सुख के रूप में जो फल प्राप्त हुआ उसको हम जान गए हैं। पिछले कर्मों के फल अनुसार ही हमारा वर्तमान जीवन भी स्थितियों और परिस्थितियों में से गुजरता जा रहा है। परन्तु ज्ञान होने के कारण ये उतार-चढ़ाव हमारी **चेतना** को अपने में उलझा नहीं पाते। हम जान गए हैं कि वर्तमान काल के हमारे कर्मों के दो पहलू हैं—एक पुरुषार्थ और दूसरा प्रालब्ध। अतः अनुकूल परिस्थितियाँ प्रालब्ध के रूप में आती हैं जो हमारी आस्था, विश्वास और निश्चय को गहरा बना देती हैं। दूसरी ओर विपरीत परिस्थितियाँ जो देखने मात्र ही विपरीत होती हैं, हमारे लिए वरदान बनकर आती हैं क्योंकि यह पुरुषार्थ में तीव्रता लाती हैं।

इन्हीं स्थितियों, परिस्थितियों से बना हमारा यह संगमयुगी जीवन अति सुन्दर है। जिस प्रकार दिन और रात मिलकर समय की सुन्दरता का निर्माण करते हैं उसी प्रकार से उतार-चढ़ाव जीवन यात्रा को मनोरम बना देते हैं। यदि परिवर्तन न आए तो जीवन रसहीन, अर्थहीन-सा प्रतिभासित होने लगता है। सांसारिक यात्रा में भी रास्ता यदि एकदम सीधा, समतल और लम्बा हो तो यात्री जितना आगे बढ़ता है उतना ही दूसरा किनारा उसे नजदीक आने के बजाए दूर जाता दिखाई देता है। उसे थकान की महसूसता आने लगती है। परन्तु यात्रा में कभी नदी आती है जिसे पार करके उसे ठण्डक मिलती है, कभी झाड़-झंखाड़ आते हैं जिनमें उसका दामन उलझ-उलझ जाता है, कभी रास्ते का मोड़ उसे आभास कराता है मंजिल आई की आई और कभी वृक्ष की ठण्डी छाँव लोरियाँ देकर उसकी पिछली थकान को दूर कर देती हैं। ये सभी परिवर्तनशील दृश्य उसमें उमंग बनाए रखते हैं और मंजिल पर पहुंचने की शक्ति उसमें भर देते हैं।

सृष्टिचक्र का ज्ञान भी हम आत्माओं की बदलती हुई इच्छाओं, कामनाओं, जरूरतों पर ही आधारित है। द्वापरयुग और कलियुग के दौरान स्वयं के और प्रकृति के बन्धनों से थक कर आत्मा भगवान से मुक्ति के लिए प्रार्थना करती है। देह तथा देह की दुनिया से मुक्ति पाने पर घर (निर्वाणधाम, ब्रह्मलोक) में जाकर सम्पूर्ण शान्ति का अनुभव करने के बाद वह फिर प्रकृति के साथ सम्बन्ध निभाने की इच्छा लेकर पृथ्वी की स्टेज पर आ जाती है। धीरे-धीरे यह सम्बन्ध बन्धन में बदल जाता है और फिर उसकी मुक्ति की पुकार गूँजने लगती है। आत्मा की यही परिवर्तनशीलता उसकी चेतनता की निशानी है। इसी विषय में ज्ञानमार्ग पर चलते समय आने वाली विभिन्न परिस्थितियों के बारे में एक भाई का प्रश्न था कि जब मैं घर से आश्रम आने लगता हूँ तो कभी माताजी रोकती हैं, उनको मनाता हूँ तो भाई बहन रूकावट बनने की कोशिश करते हैं। ऐसे में मैं क्या करूं? मुझे बड़ी निराशा होती है तथा मन में बड़ा द्वन्द्व उठता है कि एक अच्छे कार्य के लिए इन्हें मुझे सहयोग देना चाहिए न कि रोकना चाहिए। उनको बताया गया कि यह परिस्थिति ही आपकी स्वस्थिति बनाएगी। आप जरा ऐसी स्थिति की कल्पना तो करके देखो जिसमें घर का हर सदस्य आपको आश्रम जाने के लिए कह भी रहा है, सहयोग भी दे रहा है। ऑफिस से आते ही माताजी कहें आप भले आश्रम जाइये, भाई-बहन, पत्नी सभी कहें घर की सारी जिम्मेवारियाँ हम सम्भालते हैं, आप ज्ञान, ध्यान करिए। तब आपको कैसा लगेगा? अवश्य ही आपके मन में आएगा कि क्या इनके लिए मेरे जीवन की कोई उपयोगिता नहीं है? और इस तरह की अनुकूल परिस्थिति को पाकर आपका पुरुषार्थ ढीला होता जाएगा और थोड़े समय में आप आश्रम आने से उपराम होते जाएंगे। अतः यह बन्धन अच्छे हैं जो आपमें प्रतिकूल को अनुकूल बनाने की क्षमता भरते हैं।

जीव-विज्ञान का एक नियम है—"अनुकूलन क्षमता।" इस नियम के अनुसार प्राणियों के जो वर्ग अपने को वातावरण के अनुसार ढालने में सक्षम होते हैं उन्हों का ही अस्तित्व इस भूतल पर बच पाता है। उसमें सभी प्रकार के पशु, पक्षियों, कीटों आदि का अध्ययन करके बताया गया है कि मनुष्य में यह क्षमता सबसे अधिक होती है। यह बात निर्विवाद सत्य है। क्योंकि मनुष्य विशेष अपनी शक्ति उस कार्य को करने में लगाता है जिसे अन्य साधारण व्यक्ति असम्भव मानते हैं अथवा वह कार्य करके उसको खुशी होती है जिसे करने में उसके आगे रुकावटें आती हैं। दूसरे शब्दों में परिस्थितियों से जूझने से उसे सुख मिलता है और इसमें लगाई शक्ति के कारण ही वह साधारण मानवों की भीड़ में असाधारण बन जाता है। इसी बात को लेकर एक बहन जिसे ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति में परिवार और समाज की अनेकानेक रुकावटों का सामना करना पड़ा, उसने अपने बारे में बताया कि जब वह यह याद करती है कि उसने भगवान के इस घर को बड़ी मेहनत और त्याग के बाद पाया है तो उसका जीवन नवीन

(शेष -२३ पृष्ठ पर)

—श्री मत—

ब्र.कु. ओम प्रकाश, बांदा

संयुक्त गण राज्य अमेरिका के राष्ट्रपतियों में सबसे युवा राष्ट्रपति जान. एफ. कनेडी का नाम विश्व विख्यात है। उनकी एक बहुत अच्छी आदत थी, वह यह कि जब कभी भी उनके राष्ट्र के समक्ष, समाज के समक्ष, उनकी पार्टी के समक्ष या व्यक्तिगत जीवन में कोई गंभीर समस्या आती और जिसे वे स्वयं नहीं हल कर पाते, तो वे व्हाइट हाउस के उस कक्ष में जाकर बैठते, जहां अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का चित्र लगा है। वे उनके विशाल चित्र के सामने बैठ गंभीर चिंतन करते और यह सोचते रहते कि यदि यह समस्या अब्राहम लिंकन के सामने आयी होती, तो उन्होंने इसका क्या हल निकाला होता।

यही कारण था कि मात्र ४४ वर्ष की अल्पायु में अमेरिका जैसे विशाल एवं शक्तिशाली राष्ट्र के राष्ट्रपति होने का ही गौरव उन्हें नहीं मिला वरन् उनकी गिनती विश्व के सफल राजनीतिज्ञों एवं कूटनीतिज्ञों में की जाती है।

दूसरी ओर जब हम प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की ओर देखते हैं तो पाते हैं कि यहां तो इस बात का प्राथमिक प्रशिक्षण दिया जाता है कि हर ब्रह्माकुमार एवं ब्रह्माकुमारी अपनी हर छोटी-बड़ी समस्या के लिये "बाप-दादा" के समक्ष बैठकर अपनी उस समस्या का समाधान यह चिंतन करते हुये खोजें कि यदि बाप-दादा साकार में पूर्व की भाँति सामने होते तो उन्होंने इसका क्या हल बताया होता।

हम देखते हैं कि ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय का प्रत्येक कार्य "बाप-दादा" अर्थात् ज्ञान के सागर, आनन्द के सागर, प्रेम के सागर, सर्वशक्तिमान, परमपिता, परम शिक्षक, परम सतगुरु, सर्वआत्माओं के परम पिता परमात्मा शिव द्वारा वर्तमान संगमयुग के समय ब्रह्मातन के साकार माध्यम से सम्पादित किये गये कर्मों को समक्ष रखकर किया जाता है, तो सफलता सुनिश्चित रहती है। इसीलिये प्रत्येक ब्रह्माकुमार एवं कुमारी कहते हैं, "सफलता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

सभी ब्रह्मावत्स इस नियम का पालन करते हैं, इसे ही "श्री मत" अनुसार कर्म करना कहा जाता है।

यही कारण है और यही सफलता का रहस्य कि ईश्वरीय विश्व-विद्यालय दिन-दूनी, रात-चौगनी उन्नति करता हुआ "विश्व शान्ति" तथा "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" अर्थात् रामराज्य या बैकुंठ की स्थापना जैसे अपने श्रेष्ठ उद्देश्य में सफलता की ओर अपने दृढ़ कदम रखते हुये आगे बढ़ता जा रहा है।

तो प्यारे बहनों एवं भाइयों, आओ! हम ब्रह्मावत्स राष्ट्र, धर्म, भाषा, जाति व लिंग आदि का बिना भेद किये सर्व को ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के भारत में चंहुओर फैलें १७०० केन्द्रों में पधारने हेतु ईश्वरीय अलौकिक निमंत्रण देते हैं और आह्वान करते हैं कि यहां आकर सर्व आत्माओं के पिता परमात्मा शिव अर्थात् अल्लाह अर्थात् सुप्रीम गाड फादर द्वारा ब्रह्मातन के भाग्यशाली रथ के माध्यम से पढ़ाई गई, पढ़ाई पढ़ो। साथ ही उनकी "श्रीमत" अनुसार आचरण करो, जिससे विनाश के बाद शीघ्र स्थापित होने वाले सर्व सुख-शांति-समृद्धि सम्पन्न श्री लक्ष्मी नारायण के राज्य में जन्म लेने व सुखभोग करने के २१ जन्मों के अधिकारी बन सको।

शीघ्रता कीजिये! शिव बाबा द्वारा बुकिंग जारी है भविष्य में देवी-देवता बनने वालों की। ध्यान रखे! सतयुग की आदि में पूरे विश्व की आबादी मात्र ९ लाख होगी जबकि वर्तमान में विश्व की आबादी ५०० करोड़ हो चुकी है और विनाश पूर्व अन्तिम आबादी ५५० करोड़ के अति निकट है।

विराट नगर (नेपाल): ब्र.कु. शान्ता, भूतपूर्व प्रधानमंत्री की धर्मपत्नी श्रीमती राधापालुगा को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

उषागंज-इन्दौर: नव विश्व आगमन आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन न्यायमर्ति आर.के. वर्मा जी करते हुए।

श्रेष्ठ समाज का सृजन

(ब्र.कु. डाक्टर सुमति वराडपांडे, दमोह)

व्यक्तिगत सुख के लिये श्रेष्ठ समाज का होना अनिवार्य है। श्रेष्ठ समाज का सृजन श्रेष्ठ व्यक्ति के नेतृत्व में ही हो सकता है। व्यक्तिगत उन्नति उन्नत समाज में ही संभव है। दूषित वातावरण में पारिवारिक उन्नति केलिये किये गये प्रयत्न निष्फल होते हैं। किसी मुहल्ले में आग लगी हो अथवा हैजा फैला हो तो उसमें रहने वाले स्वच्छता प्रिय और जागरूक लोगों की भी सुरक्षा नहीं हो सकती। दुष्टों से घिरा सज्जन चैन से नहीं रह सकता।

वर्तमान समाज में कष्ट, कलह, शोक, संताप के असंख्य कारण मौजूद हैं। दुनिया में वस्तुओं और साधनों की कमी नहीं, कमी है केवल निर्मल मन और निर्मल बुद्धि की। सद्भावना का स्थान दुर्भावना ने ले लिया है। शुभचिंतन का स्थान अशुभचिंतन ने, आत्मचिंतन का स्थान परचिंतन ले लिया है। इसीलिये भौतिक संपन्नता सुख-शान्ति प्रदान करने में सहायक नहीं हो पा रही है। समस्यायें सुलझने के बजाय उलझती ही जा रही हैं। दुष्ट प्रवृतियों के निकास के बिना सामाजिक विकास कैसे हो सकता है? फोड़े फुन्सियों का निराकरण मात्र मलहम पट्टी करने से नहीं वरन् रक्त शुद्धि का उपचार करने से ही होगा।

लड़ाई दुष्प्रवृत्तियों से, आसुरी वृत्तियों से करनी है जो समस्त समस्याओं और विपत्तियों की जड़ है। इसके लिये वैचारिक क्रांति लानी होगी। वैचारिक क्रांति से वास्तव में सामाजिक क्रांति आ सकती है। इसके लिये ज्ञान-यज्ञ की आवश्यकता है जिसमें आसुरीयता स्वाहा करनी है। कलियुग रूपी गोवर्धन पर्वत उठाने के लिये हर एक के सहयोग की अंगुली चाहिये। एक व्यक्ति का कार्य नहीं है। प्रत्येक अपने मन बुद्धि का शुद्धीकरण कर सहयोग देवे। संगमयुग में परमपिता परमात्मा द्वारा रचित ज्ञानयज्ञ में ही ऐसा शुद्धिकरण संभव है। इस प्रकार यदि प्रत्येक मनुष्यात्मा अपनें मन बुद्धि का शुद्धिकरण कर लेवे तो श्रेष्ठ व सुखी संसार का सृजन अवश्य होगा।

(पृष्ठ २१ का शेष)

उत्साह से भर जाता है। पुरुषार्थ में तीव्रता आजाती है और मन, वचन, कर्म में किसी भी प्रकार का अलबेलापन या उदासीनता नहीं आ पाती। अतः उतार-चढ़ाव हमारे लिए शिक्षाएं हैं, जीवन-पथ के मनोरम दृश्य हैं, यही हमारे भाग्य निर्माण में सहायक हैं और यही हमें वरदानों का अधिकारी बनाते हैं।

'सच्चा साथी कौन'?

विश्व में ऐसा कौन प्राणी होगा जो यह न चाहता हो कि मेरा कोई साथी बने! हर व्यक्ति अपना साथी बनाता है ताकि मुसीबत के समय उससे सहायता मिले! वैसे भी मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिसका जीवन साथियों के बिना करना मुश्किल हो जाता है। जीवन यात्रा में मनुष्य के अनेक साथी बनते हैं। जब बच्चा छोटा है तो माता-पिता को साथी समझकर चलता है। स्कूल जाने पर वह अपनी कक्षा व अपनी आयु वाले बच्चों को मित्र बनाता है, शादी के बाद पति-पत्नी एक दो के साथी बनकर चलते है। परन्तु यह जो भी साथी होते हैं, संसारिक लेन-देन वाले ही होते हैं। जो उसी से अपना दिल थोड़े समय के लिए बहलाते हैं। ये सभी सहारे अल्पकाल के हैं जो आज हैं कल नहीं रहेंगे। अब प्रश्न उठता है कि सहारा किसका लेना चाहिए, जो व्यक्ति स्वयं ही सहारा चाहता हो, उससे सहारा मांगना भूल है, यह तो किसी भिखारी से भीख मांगने जैसी बात है। संसार के सभी साथी एक दो से इसी प्रकार का सहारा चाहते हैं, इसलिए वे कभी भी एक दो को ऊंचा नहीं उठा सकते हैं। सहारा उसी का लेना चाहिए जो दूसरों को ऊंचा उठा सके तथा सहारा देकर ऊंचा बना सके। जो व्यक्ति कमजोर शाखा पर झूला बांधकर झूलता है वह थोड़े समय की ही खुशी मना सकता है। जल्दी ही वह गिर पड़ता है। अतः सबसे सर्वोत्तम सहारा तो सर्वशक्तिवान परमात्मा ही हो सकता है, जो सभी के अविनाशी साथी हैं, जिन्हें त्वमेव माताश्च पिता.....कहकर याद किया जाता है। दुःख के समय सभी उसी भगवान को पुकारते हैं कि तुम्हीं हो साथी तुम्हीं सहारे .....एक परमात्मा के सिवा अन्य कोई भी संसार में किसी को अन्त तक सहारा देने में समर्थ नहीं है। इसीलिए उस एक का ही अविनाशी सहारा लेना चाहिए।

धर्मशाला: नगरोटा सुरियाँ में रखे गए कार्यक्रम 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' का उद्घाटन करते हुए भ्राता आर.सी. डील जी।

मन का स्वरूप

ले-ब्रह्माकुमार महेन्द्र, भूपाल

आपने कई बार देखा होगा कि सुषुप्ति अवस्था में भी किसी मनुष्य की आँखें खुली होती हैं परन्तु फिर भी वह अपने सामने की चीजों को ससंकल्प देख नहीं रहा होता। इसी प्रकार, कई बार जब मनुष्य ईश्वरीय स्मृति में स्थित होता है अथवा ज्ञान के रहस्यों के मनन-चिन्तन में तन्मय होता है तो आंखें खुली होते हुए भी उस मनुष्य को सामने पड़ी हुई वस्तुओं अथवा घटते हुए वृत्तान्तों का ज्ञान अथवा भान नहीं होता। इन दृष्टान्तों के आधार पर कुछ विचारक कहते हैं कि अन्तःकरण (मन, बुद्धि इत्यादि) आत्मा से अलग **'साधन-मात्र'** (Instruments) हैं। वे कहते हैं–"आँखें खुली हैं, शरीर में आत्मा भी मौजूद है, तब अवश्य इन चीजों के अतिरिक्त कोई तीसरी चीज और है जिसको आँखों से संयुक्त करने से बाहर की वस्तुएं दिखाई देती हैं और संयुक्त अथवा प्रयुक्त न करने से खुली हुई आँखों द्वारा भी नहीं देखा जा सकता।

मन के स्वरूप के विषय में उपर्युक्त मान्यता भले ही मालूम सत्य होती है, परन्तु वास्तव में यह सत्य नहीं है। बात को समझने के लिये यह जानना आवश्यक है कि मन, जो कि आत्मा के मनन, अवधान अथवा ध्यान (Attention) का पर्यायवाची है एक वक्त में एक ही वस्तु का मनन अथवा ध्यान (Attend) करता है। अतः जो मनुष्य ईश्वर के स्वरूप के ध्यान में अथवा ज्ञान के मनन में तन्मय है, उसकी स्थिति से ही स्पष्ट है कि उसका मन (अर्थात् ध्यान) काम तो कर रहा है परन्तु वह ऐसी अव्यक्त सत्ता के मनन में मस्त है कि आँखों का प्रयोग नहीं कर रहा। इसलिए यह कहना असत्य होगा कि मन कोई अलग सत्ता है जिसे कि आँखों के साथ संयुक्त नहीं किया गया; इसकी बजाय यह कहना सत्य होगा कि मन आत्मा के ही ध्यान अथवा संकल्प को कहते हैं और ईश्वर का स्वरूप-चिंतन करने वाले मनुष्य का ध्यान ही बाह्य पदार्थों में नहीं था बल्कि वह ईश्वर का मनन कर रहा था जिस कारण आँखें खुली होते हुए भी उसे बाह्य पदार्थ दिखाई नहीं दिये, क्योंकि आत्मा एक वक्त में एक ही ओर ध्यान दे सकती है।

इसी प्रकार सुषुप्ति अथवा निद्रा, आत्मा की विचारधारा को बन्द करने, आराम लेने, शरीर ढीला छोड़ने की **इच्छा** के परिणाम अथवा अभिव्यक्ति का नाम है। वास्तव में सुषुप्ति की सारी क्रिया ही से मालूम पड़ता है कि मन आत्मा से अलग कोई चीज नहीं है और खुली हुई आँखों वाला दृष्टान्त तो इस सत्यता को और भी ज्यादा सिद्ध करता है क्योंकि यदि अन्तःकरण आत्मा से कोई अलग साधन होता है तो आँखों के खुला होने पर दिखाई देने की क्रिया बन्द न हो जाती। अतः सिद्ध है कि मन इत्यादि आत्मा से अलग कोई उसके **साधन** नहीं हैं बल्कि स्वयं आत्मा ही के संकल्प, अवधान, मनन इत्यादि योग्यताओं के नाम हैं।

कुछ लोग श्वासों को रोक कर अर्थात् प्राणायाम करके मन को (संकल्पों को) रोकने का अभ्यास करते हैं। उनका यह अभ्यास इस निश्चय पर आधारित होता है कि मन प्रकृतिकृत साधन है। प्राणायाम द्वारा संकल्पों (मन) को बाह्य विषयों से रोकने में कुछ सफलता मिलने पर उनका यह निश्चय दृढ़ हो जाता है कि श्वासों पर नियन्त्रण करके मन को रोका जा सकता है। इस आधार पर भी वे मानते हैं कि मन प्रकृतिकृत है।

परन्तु वास्तविकता यह है कि प्राणायाम करने वालों का भी मन बिल्कुल निष्क्रिय (in-active) अथवा निस्संकल्प नहीं हो जाता बल्कि उनका मन प्राणायाम करने का संकल्प कर रहा होता है। वह प्राणायाम द्वारा कुछ समय के लिए बाह्य विषयों से अपना सम्पर्क अथवा सम्बन्ध तोड़ देता है। बाह्य विषयों का आभास न होने के कारण लोग समझते हैं कि मन बिल्कुल रुक गया परन्तु वास्तव में तो मन पूर्णतः निष्क्रिय नहीं हुआ होता।

शरीर में जो स्नायु हैं और प्राण हैं उन द्वारा ही आत्मा कर्मेन्द्रियों का विषयों से सम्पर्क स्थापित करती है। प्राण और स्नायुओं द्वारा (विषयों से) निरोध करने में लगा हुआ मन (जो कि स्वभावतः एक वक्त में एक ही तरफ ध्यान दे सकता है) बाह्य दुःखपूर्ण एवं अशान्त जगत् का अनुभव नहीं कर सकता और विषयों को प्रत्यक्ष भी नहीं कर सकता। इसके परिणामस्वरूप मनुष्य प्राणायाम के समय में जो अनुभव करते हैं उसे वे 'शान्ति' नाम से याद करते हैं, परन्तु वास्तव में वह सच्ची शान्ति की प्राप्ति की अवस्था न होकर **'अशान्ति की अनुपस्थिति'** की अवस्था होती है। उस अवस्था में मन अनेकानेक विषयों का संकल्प न कर रहा होने के कारण 'चंचल' नहीं होता परन्तु प्राणायाम करने अथवा प्राणायाम की स्थिति को बनाये रखने के संकल्प वाला तो होता ही है। इससे स्पष्ट है कि मन प्रकृतिकृत नहीं है बल्कि वह तो चैतन्य आत्मा के संकल्प का नाम है और प्राणायाम द्वारा आत्मा का बाह्य जगत् से सम्बन्ध-विच्छेद तो किया जा सकता है परन्तु आत्मा संकल्प तो तब भी करता ही है, चाहे वह संकल्प प्राणायाम की स्थिति को बनाये रखने का हो या दुःख की अनुपस्थिति को अनुभव करने का हो। अतः मन को प्रकृतिकृत मानने की बजाए, आत्मा ही का संकल्प मानकर उसे आनन्द के सागर परमात्मा की स्मृति में स्थित करने से मनुष्य आनन्दित हो सकता है।

"मीठे बोल – बड़े अनमोल"

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, आबू-पर्वत.

संसार में ऐसा कोई नहीं होगा जिसे मीठी चीज़ अच्छी न लगती हो। हाँ, ये हो सकता है कि किसी कारणवश वह खाने से मजबूर हो, लेकिन अच्छी ज़रूर लगती है। ऐसे ही देवी-देवताएं भी सभी को प्यारे लगते हैं क्योंकि उनमें दिव्य गुणों रूपी अनोखी मिठास है जो हर मन को लुभाती है। तो यहाँ प्रस्तुत है अतुल और मधुसूदन की पारस्परिक ज्ञान-चर्चा —'आसुरी गुण रूपी कड़वेपन को निकालकर कैसे अपना जीवन सदा के लिए मीठा अर्थात् सुखी बनाएँ?'

आज अतुल अपने कमरे में लगे हुए श्रीलक्ष्मी-श्रीनारायण के चित्र के सामने बैठकर मन ही मन अपने भाग्य को कोसते हुए पश्चाताप के आँसू बहाए जा रहा था। उसके चहरे पर हीनता के भाव स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। इतने में उसके परम-स्नेही मित्र मधुसूदन का कमरे में आना हुआ।

मधु–(आश्चर्य से) – अरे अतुल, ये क्या... आँखों में आँसू क्यों?

अतुल–(आँसू पौंछते हुए) – कुछ नहीं, मैं तो ऐसे ही बैठा था...

मधु–(हठ से) – सच बताओ अतुल, क्या हुआ...?

अतुल–इन देवताओं के जीवन रूपी दर्पणमें मैं अपना मुखड़ा देख रहा था। सचमुच इनमें कितना मिठास है और हमारे में कितना कड़वापन। कल हुई भूल से पश्चाताप की अग्नि में जल रहा था...

मधु–कौनसी भूल हुई आपसे?

अतुल–कल न जाने कैसे मेरे मुख से मनोज के प्रति कटु वचन निकल गए। मनोज ने गुस्से से मुझे जोर में 4-5 थप्पड़ लगाए जो मेरे लिए असहनीय थे। अगर मैं कटुवचन नहीं बोलता तो ये मुसीबत मुझ पर नहीं आती।

मधु–अतुल, इस मुख के कड़वेपन से ही दुनिया में आये दिन न जाने कितने किस्से होते होंगे। मनुष्य तो मुख से जहर उगलकर एक-दूसरे को बिच्छू की तरह काटते रहते हैं जिससे मनुष्य निरुत्साहित तथा मूर्छित हो जाते हैं।

अतुल–मधु भैया, मैं तो अपनी वाचा पर नियंत्रण रखने की बहुत कोशिश करता हूं, लेकिन...

मधु–अतुल, वास्तव में कटु-वचन की हिंसा अति घातक है। कटु बोली की गोली सदा के लिए घायल कर देती है।

अतुल–भैया, ये कटु वचन मुख से क्यों निकलते हैं?

मधु–कटु वचन बोलना ये अहंकार का प्रतीक है। जब हम स्वयं को अधिक होशियार समझने लगते हैं तो अहं का भूत आत्मा पर सवार होता है जिससे स्वतः ही वाचा में कड़वापन आने लगता है।

अतुल–अहं के अलावा क्या और भी कारण हैं?

मधु–कटुवचन निकलना अधैर्यता व बेसमझी का भी प्रतीक है। जो दूसरों के दिल को कटु वचन रूपी तीर से घायल करते हैं, वे कभी भी सच्चे सुख के अधिकारी नहीं बन सकते। वास्तव में कटु वचन बोलने की आदत आध्यात्मिक पथ पर आगे बढ़ने में विशाल रोड़ा है।

अतुल–भैया, अब मैं कटु वचन के नुकसान भली-भांति समझ गया हूँ। अब मैं सदा मीठे बोल बोलने की ही पूरी कोशिश करुंगा...

मधु–अतुल, कहते हैं–'मीठे बोल, बड़े अनमोल'। मीठे बोल में बल भी होता है और उसकी कीमत भी होती है। इसलिए हमारे वचन ऐसे हों जिससे सुनने वाले अनुभव करें कि हम पर वरदानों की, सुखों की वर्षा हो रही है।

अतुल–मधु भैया, आपकी मधुर बातें सुनते हुए सचमुच मुझे सुख का अनुभव हो रहा है। आपने मधुर बनने के लिए कौनसा पुरूषार्थ किया?

मधु–मैंने विशेष मधुरता को जीवन में धारण किया। इस गुण को अपनाने से अपने व्यवहार में प्रेम और सुख देने की भावना सदा जागृत रहती है। शिव परमात्मा भी हमें मधुरता से शिक्षाएं देते हैं।

अतुल–भैया, परमात्मा कैसे शिक्षाएं देते हैं?

मधु–जैसे सपेरा बीन बजाकर अपनी सुरीली आवाज से ज़हरीले नाग को भी अपने वश में कर लेता है, फिर उसके जहरीले दाँत निकाल कर घर-घर घुमाता है। लोगों के मन का भय दूर करके उन्हें खेल दिखाता है। ऐसे ही जब परमात्मा ज्ञान मुरली बजाते हैं तो उसकी मीठी धुन को सुनकर आत्मा सुध-बुद्ध भूलकर अतीन्द्रिय सुख का अनुभव करने लगती है। तब परमात्मा आत्मा के 5 विकाररूपी जहरीले दाँत निकाल देता है और उन्हें जन कल्याण की सेवा में लगा देता है।

अतुल–भैया, परमात्मा की महिमा तो अपरंपार है ही...

मधु–परमात्मा आत्माओं को जो अपनी मुरली से सुन्दर गीत, सुनाते हैं उसी का ही गायन 'श्रीमद्भगवद्गीता' के रूप में भक्त लोग गाते हैं। वास्तव में 'भगवद्गीता' परमात्मा के मीठे बोलों का ही तो अनुपम संग्रह है जिसको मात्र पढ़ने से ही भक्त सुख का अनुभव करते हैं।

अतुल–भैया, परमात्मा के मीठे बोल तो हमें सदा ही ऊँचा उठाते हैं। लेकिन कभी समय आने पर क्या हम किसी की महिमा मीठे बोल से व्यक्त करें या नहीं?

मधु–मीठे बोल से महिमा करके दूसरों में उमंग उल्लास भरना और उन्हें पुरुषार्थ में आगे बढ़ाना यह तो पुण्य का काम है। दूसरों के स्वमान को ऊंचा उठाना या जगाना चाहिए। सिर्फ यह ध्यान रहे महिमा करके दूसरों को अपने प्रभाव में लाने के बजाय परमात्म प्रभाव में लाना चाहिए। उनके प्रभाव में भी नहीं आना चाहिए जिससे भविष्य में क्षति पहुँचे।

अतुल–भैया, मीठा बनने का भावार्थ क्या है?

मधु–मीठा बनना अर्थात् हमारे बोल मीठे हों, दृष्टि मीठी हो, मन्सा मीठी हो, कर्म भी मीठे हों अर्थात् हमारा स्वभाव देवताओं समान अति मीठा हो।

अतुल–भैया, हमारे बोल मीठे कैसे हों...?

मधु–अतुल, यह उक्ति प्रसिद्ध है कि बोल ही मनुष्य की अतंर्निहित भावनाओं को स्पष्ट करते हैं इसलिए हमारे बोल ऐसे हों कि जो अनेक जन्मों से माया से संत्रस्त आत्माओं के कानों में पड़ते ही उनके लिए संजीवनी बूटी अथवा अत्यन्त लाभकारी औषधि सिद्ध हो।

अतुल–भैया, हमारी मीठी दृष्टि कैसी हो?

मधु–हमारी दृष्टि इतनी पवित्र अथवा मीठी हो कि हमें सभी आत्माएं अपने अनादि स्वरूप, पवित्र आत्मा के रूप में ही दिखाई दें तथा आदि रूप में भी सम्पूर्ण गुणवान जिसका गायन है 16 कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी... दिखाई दें।

अतुल–भैया, हमारी मन्सा मीठी कैसे होगी?

मधु–अतुल, हमारी मन्सा इतनी शुद्ध, निर्विकारी, निश्छल तथा परोपकारी हो कि किसी के भी प्रति बुरा सोचने का स्थान ही शेष न रह जाये। चाहे कोई हमारा अनिष्ट चाहने वाला ही क्यों न हो उसके प्रति भी हमारा भाव सदैव शुभचिन्तक का हो।

अतुल–भैया, हमारे कर्म मीठे अर्थात् सदा सुखदायी कैसे हों?

मधु–अतुल, वास्तव में कर्म हमारी स्थूल तथा सूक्ष्म स्थिति का परिचय देते हैं। इसलिए कर्म पर हमारा पूरा-पूरा ध्यान रहे कि हमारे हर कर्म में कहाँ तक मिठास आई है तथा हमारे कर्म कहाँ तक लोकप्रिय हुए हैं। कर्म को प्रारम्भ शिवबाबा की याद से करें और समाप्ति पर उसे प्रभु-अर्पण करें। फिर उसके परिणाम पर ज्यादा चिन्तन न करें, न ही उसका वर्णन करें। याद रहे – कर्म ही वह कला है जो मन-पसन्द, लोक-पसन्द और प्रभु-पसन्द बनाने तथा सफलता के उच्च शिखर पर पहुँचाने में समर्थ है।

तो आओ – हम सभी मिलकर अपने स्वभाव, संस्कारों को मीठा बनाने का पुरूषार्थ करने में एक दो को सहयोग देकर आगे बढ़ें जिससे जल्दी ही इस वसुंधरा पर सुखमय संसार उतर आये।

अतुल–मधु भैया, आपने अपने जीवन रूपी छत्ते से मधु चखाई, इसलिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।

गोरेगांव (बम्बई): *मलाड के सुप्रसिद्ध साई बाबा मंदिर में चैतन्य देवियों की झांकी का दृश्य तथा देखने आए भक्तों की भीड़।*

आध्यात्मिक सेवा समाचार

जालंधर—"सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम का शुभारंभ शिक्षा से सम्बन्धित विशिष्ठ व्यक्तियों के स्नेह-मिलन द्वारा किया गया । इस अवसर पर स्थानीय कालेजों के प्रिंसीपल, प्रोफेसर तथा स्कूल के प्रधानाध्याक उपस्थित थे । सर्कल एजुकेशन आफिसर जालंधर ने मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया । सभी उपस्थित व्यक्तियों ने विश्वविद्यालय के इस नये प्रयास में हर सम्भव सहयोग का विश्वास दिलाया ।

जोधपुर—राजयोगिनी विश्व सेवाधारी दादी प्रकाशमणी जी के जोधपुर आगमन पर अभिनंदन समारोह मनाया गया । दादी जी का स्वागत यहाँ में रोटरी क्लब, लायंस क्लब बार एसोसिएशन तथा अन्य संस्थाओं द्वारा स्वागत गेट बनाए गए । नगर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने आपको शान्तिदूत पुरस्कार प्राप्त होने की बधाई दी ।

इलाहाबाद—"सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" की अद्भुत योजना का शुभारंभ किया गया है । इसी लक्ष्य को लेकर यहाँ की प्रमुख तहसील मेजा में व नैनी में आध्याात्मिक प्रदर्शनी व राजयोग शिविर का आयोजन किया गया । इसके अलावा महिला संकीर्तन मण्डल, स्काउट गाइड टीचर्स शिविर में ब्रह्माकुमारी बहनों के प्रवचन हुए । इन कार्यक्रमों से अनेक आत्माओं को परमपिता परमात्मा का अलौकिक सन्देश मिला ।

बिलासपुर—समाचार मिला है कि "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम का शुभारंभ भ्राता रामनारायण शुक्ल, प्राचार्य द्वारिका प्रसाद महाविद्यालय ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया । इस शुभ अवसर पर शहर के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने भाग लिया । ब्रह्माकुमारी बहनों ने आध्यात्मिक जीवन दर्शन की आवश्यकता पर जोर दिया । ब्रह्माकुमार विमल कुमार श्रीवास्तवा, प्राचार्य ने धन्यवाद देते हुए कहा कि ईश्वरीय शक्ति का आधार लेकर ही सर्व के सहयोग से सुखमय संसार की स्थापना संभव है ।

कोटा—"सर्व के सहयोग से सुखमय संसार की स्थापना" कार्यक्रम का उद्घाटन सेवाकेन्द्र पर ही किया गया । इस अवसर पर मुख्य अतिथि हाडोति शोध संस्थान के निर्देशक डॉ. शान्ति भारद्वाज, वरिष्ठ पत्रकार, स्वतंत्रता सेनानी एवं समाजसेवी भ्राता आनन्द लक्ष्मण भ्राता महावीर प्रसाद पंचोली आदि ने अपने विचार प्रगट किए ।

सहारनपुर—सेवाकेन्द्र पर एक पत्रकार सम्मेलन का आयोजन करके इस विद्यालय द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बनाई गयी अद्भुत योजना का शुभारंभ किया गया, जिसमें पूरे जनपद के लगभग ३० पत्रकारों ने भाग लिया । इस सम्मेलन को अंग्रेज़ी पत्रिका प्योरिटी के सम्पादक बी.के. बृजमोहन जी ने सम्बोधित किया तथा पूरे जनपद से आमंत्रित पत्रकारों को "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम की विस्तृत रूप-रेखा से अवगत कराया । इसके अलावा एक सार्वजनिक कार्यक्रम में नगर के अनेक प्रतिष्ठित एवं गणमान्य व्यक्तियों को आमंत्रित कर इस योजना की विस्तृत जानकारी दी गयी ।

हैदराबाद—से समाचार मिला है कि हैदराबाद शहर के सभी मुख्य स्थानों पर गणेश मूर्ति स्थापन कर पूजन एवं भजन आदि के प्रोग्राम चलते है जिसमें अपने सेवाकेन्द्र को भी सम्मिलित होने के निमंत्रण विभिन्न स्थानों से मिले । वहाँ जाकर बहनों ने प्रवचन किए तथा प्रोजेक्टर-शो भी दिखलाये । गणेश विसर्जन दिवस पर शहर के सभी गणेशों की विशाल शोभा-यात्रा के मार्ग पर आध्यात्मिक प्रदर्शनी द्वारा लाखों आत्माओं को ईश्वरीय संदेश दिया गया ।

डिबरूगढ़—"सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" नामक कार्यक्रम खूब धूमधाम से आरम्भ किया गया । सर्वप्रथम शहर के मुख्य-मुख्य भागों से एक विशाल शोभा-यात्रा निकाली गयी । इसके पश्चात् सार्वजनिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया । इस कार्यक्रम में असम मेघालय व नागालैंड उच्च-न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वाइस चांसलर अतिथि के रूप में पधारे । इनके अलावा अनेक मुख्य व्यक्ति इस कार्यक्रम में पधारे ।

अहमदनगर—सेवाकेन्द्र की ओर से "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम के उपलक्ष्य में पत्रकार सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें पचीस पत्रकारों ने भाग लिया । इस शुभ अवसर पर इस कार्य को सहयोग देने हेतु सभी ने अपनी बुराइयों को दान में देने का संकल्प किया और अपने समाचार-पत्रों द्वारा इस कार्य को प्रसिद्धि देने का सभी ने दृढ़ संकल्प किया ।

शुज़ालपुर मन्डी— समाचार मिला है कि "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार की स्थापना" कार्यक्रम का उद्घाटन भूतपूर्व वित्त तथा राजस्व मंत्री मध्य भारत के भ्राता सौभाग्यमल जी जैन ने किया । भागवत पुराण के प्राख्यात विद्वान भ्राता पं. पुरुषोत्तम दास जी शर्मा तथा मयूर आयलज़ मिल के मैनेजर भ्राता देवेन्द्र नाथ पांडे जी विशिष्ठ अतिथि के रूप में उपस्थित हुए ।

रायगढ़सेवाकेन्द्र की ओर से "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" की स्थापना का उद्घाटन मुख्य अतिथि माननीय भ्राता कृष्ण कुमार गुप्ता, विधायक रायगढ़ द्वारा सम्पन्न हुआ । जिला न्यायाधीश भ्राता लक्ष्मी नारायण तिवारी स्व. प्राचार्य भ्राता सीता राम शर्मा ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए । इस अवसर पर शहर के गणमान्य व्यक्ति एवं प्रशासनिक अधिकारी उपस्थित थे ।

कासगंज– ज्ञात हुआ है कि "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार की स्थापना" का कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्य अतिथि भ्राता रवेन्द्र कुमार सक्सेना, ज़िला कांग्रेस आई के उपाध्यक्ष जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । इसके अतिरिक्त भ्राता राजेन्द्र कुमार बंसल जी भी उपस्थित थे । आप लोगों ने बुराइयों से दूर रहने के शुभ-विचार जनता के सामने रखे ।

पणजी-गोवा–सेवाकेन्द्र की ओर से म्हापसा में पुलिस-स्टेशन पर राजयोग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था, जिसका उद्घाटन म्हापसा-गोवा के डी.एस.पी. भ्राता गुरुदास जुवारकर ने किया । उनके साथ हेड कांस्टेबिल नारायण केरकर, दैनिक तरुण भारत तथा नवहिंद टाइम्स के रिपोट र्स भी उपस्थित थे, उन्हें प्रदर्शनी समझाई गयी । सार्वजनिक कार्यक्रम में "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम सभी को गुणों को धारण कर सहयोगी बनने का आह्वान किया गया ।

परतवाड़ा– स्थानीय सेवाकेन्द्र परतवाड़ा की ओर से अचलपुर शहर में नये गीता पाठशाला का उद्घाटन पुलिस इंसपेक्टर भ्राता दुबे जी के शुभ हस्ते सम्पन्न हुआ । इस शुभ अवसर पर पत्रकार भ्राता भगवती जी भी उपस्थित थे ।

अहमदाबाद– कार्यक्रम का शुभारंभ शहर के प्रसिद्ध टाउन हाल में सम्पन्न हुआ । गुजरात राज्य के राज्यपाल भ्राता आर.के. त्रिवेदी जी, तथा दादी प्रकाशमणी जी भी इस शुभ अवसर पर पधारी थीं । इस प्रोग्राम द्वारा अनेक आत्माओं को ईश्वरीय सन्देश दिया गया ।

कटक (तलंगा बाज़ार)– अंतर्राष्ट्रीय अभिनव योजना को हर आत्मा के पास पहुँचाने हेतु एक पत्रकार सम्मेलन बुलाया गया था जिसमें यहाँ के मुख्य सांवादिक इकट्ठे हुए । फलस्वरूप सभी समाचार-पत्रों में प्रोग्राम प्रसारित हुआ । साथ ही साथ एक सामूहिक प्रोग्राम भी रखा गया । इस प्रोग्राम का उद्घाटन भ्राता हबीब मोहम्मद जी ने किया । सभी लोगों ने यही बोला हम लोग सभी प्रकार का सहयोग देंगे ।

सिवनी–सेवाकेन्द्र द्वारा "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" का उद्घाटन समारोह मनाया गया । समारोह के मुख्य अतिथि कलेक्टर भ्राता डी.आर. उपेगरे जी एवं विशिष्ट अतिथि जिला उद्योग केन्द्र के महाप्रबंधक भ्राता ए.के. राजमणी जी के द्वारा समारोह का उद्घाटन हुआ । इस कार्यक्रम में पत्रकार, अधिकारी, डॉक्टर्स, रोटरी क्लब के अध्यक्ष, वकील, अध्यापक आदि लोगों ने भाग लिया ।

उज्जैन– सेवाकेन्द्र द्वारा "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" का उद्घाटन समारोह धूमधाम से किया गया । इस कार्यक्रम में स्वतंत्रता संग्राम भ्राता अवन्तीलाल जैन जी जो कि यहाँ के वरिष्ठ पत्रकार हैं और सिन्धी समाज के प्रचार एवं प्रसार मंत्री भ्राता गोरधन कृष्णानी जी भी उपस्थित थे । सर्व ने नए विश्व की स्थापना में सहयोगी बनने का संकल्प किया ।

फीरोजाबाद–समाचार मिला है कि क्लब के विशाल कक्ष में "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम रखा गया । सभा में राजनीतिक, प्रमुख उद्योगपति, साहित्यकार आदि उपस्थित थे । लखनऊ विधानसभा के जनता पार्टी के विधायक रघुवर दयाल वर्मा तथा बालकृष्ण ग्प्त, उमेश जोशी, साहित्यकार, प्रोफेसर डॉ. एम.एल. परासर जी आदि महानुभाओं ने अपने सुन्दर विचार जनता के सामने रखे ।

अम्बाजी–सेवाकेन्द्र द्वारा दांता गांव में "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" कार्यक्रम का आयोजन किया । इस अवसर पर प्रदर्शनी और राजयोग शिविर का आयोजन किया गया । अम्बाजी गांव के सिन्धी भाई-बहनों का स्नेह-मिलन रखा गया । जिसमें भाग लेने के लिए आबू से आनन्द किशोर जी पधारे । आप ने सिन्धी भाषा में संस्था का तथा परमात्मा का परिचय दिया ।

बेलगाम–सेवाकेन्द्र की ओर से "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम का उद्घाटन भ्राता अमर सिंह पाटिल प्रेसीडेन्ट जिला परिषद बेलगाम द्वारा हुआ । यह कार्यक्रम बहन सुनंदा पाट्टिल, अपाध्यक्ष जि. प्र. की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ । इस कार्यक्रम में शहर के प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे । मुख्य अतिथि के रूप में समाज के सर्व वर्ग के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे । सभी लोगों ने अपने अपने भाषण में अपना-अपना सहयोग देने का वादा किया ।

शिमला– "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" की स्थापना हेतु शिमला में अधीक्षक पुलिस भ्राता डी.एस. अमिस्ट, उप-अधीक्षक भ्राता बृज मोहन, सम्पादक भ्राता बी.आर. शर्मा व अन्य वरिष्ठ नागरिकों ने मोमबत्तियाँ जलाकर इस कार्यक्रम का शुभारम्भ किया ।अनेक वर्ग के आए अतिथियों ने इस कार्यक्रम का स्वागत किया व पूरा योगदान देने के लिए वचन दिया ।

दमोह–सेवाकेन्द्र द्वारा राजयोग शिविर का आयोजन किया गया । राजयोग शिविर में अनेक डॉक्टरों, वकीलों, शिक्षकों, इंजीनियरों और नामीग्रामी व्यवसायियों ने उपस्थित होकर शिविर से लाभ लिया । इस शिविर में मध्यप्रदेश विधानसभा के विधायक भ्राता कुसमरिया, दमोह के प्रसिद्ध डॉक्टर हजारी जी ने राजयोग का अपना अनुभव सुनाया । ब्र.कु. डॉक्टर सुमति जी ने राजयोग व स्वास्थ्य विषय पर अपने विचार प्रगट किए ।

डीसा–सेवाकेन्द्र द्वारा शेथनपुर तहसील में "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" नामक कार्यक्रम का प्रारम्भ मंगल दीप प्रज्वलित करके सम्पन्न हुआ । शेथनपुर तहसील के कलेक्टर भ्राता वाघेला जी ने कार्यक्रम का शुभारम्भ किया । अतिथि के रूप में टी.डी.ओ. भ्राता पटेल जी, प्रेसीडेन्ट भ्राता करमण भाई पधारे थे । इस कार्यक्रम में लगभग १००० से अधिक जनता ने लाभ उठाया ।

नागपुर: नवरात्रों के उत्सव पर नागपुर में चैतन्य नवदुर्गा की झांकी तथा शान्ति सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसका उद्घाटन भागवत भूषण स्वामी दर्शनानन्द जी (संचालक गीता मन्दिर) द्वारा तथा हाई कोर्ट न्यायाधीश भ्राता धाबे जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इन लोगों ने ब्रह्माकुमारी बहनों की तथा ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की महत्वपूर्ण शब्दों से महिमा की, और भविष्य में सहयोग देने के लिए हार्दिक इच्छा व्यक्त की।

नवरंगपुर: सेवाकेन्द्र के प्रांगण में ही दशहरा के पर्व पर एवं सर्व के सहयोग से सुखमय संसार विषय पर चैतन्य झांकी प्रस्तुत की गई। एक तरफ तपस्वी रूप दुर्गा, सरस्वती की आलौकिक झांकी दूसरे तरफ सुखमय संसार की अलग राधेकृष्ण की मनोहर झांकी दिखाई गई। साथ-साथ विश्व नव-निर्माण प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया जिसे देखकर अनेक स्थानों से पधारे १५ हजार भक्त गण ने लाभ लिया।

जटनी: गणेश पूजा के अवसर पर जटनी सेवा केन्द्र की तरफ से सात दिन के लिए विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी, आश्रम के प्रांगण में लगायी गयी। इसको हजारों आत्माओं ने देखा तथा लाभ उठाया।

बोकारो स्टील सीटी: दुर्गापूजा के शुभ अवसर पर २८ सितम्बर से २ अक्तूबर तक चैतन्य देवियों की झांकी का प्रोग्राम रखा गया था। यह प्रोग्राम नव निर्मित राजयोग भवन के प्रागंण में ही रखा गया। चैतन्य देवियों की झांकी सुन्दर पंडाल बनाकर सजाई गयी थी जिसमें दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी की झांकी थी, साथ-साथ चरित्र निर्माण प्रदर्शनी भी रखी गयी। देवियो के पण्डाल का उद्घाटन यहाँ के मैनेजिंग डायरेक्टर भ्राता आर.एस. रामाकृष्ण जी ने तथा उनकी धर्मपत्नी जी ने दीप जलाकर किया।

रतलाम: स्थानीय सेवा केन्द्र द्वारा नवरात्री के अवसर पर आयोजित कालिका माता मेला प्रागंण में माँ दुर्गा की एक अत्यन्त आकर्षक नयनाभिराम चैतन्य सरस एवं सुरम्य झाँकी सजाई गयी। इस झांकी को नगर के एवं बाहर गांवों से मेले में पधारे हजारों गणमान्य नागरिकों ने दर्शन कर काफी सराहा। समापन के अवसर पर जिलाधीश भ्राता राकेश बंसल, जि. पुलिस अधीक्षक भ्राता सन्तोष कुमार एवं नगर निगम कमिश्नर भ्राता कुमावत उपस्थित थे।

बम्बई (निपन-सी-रोड): सेवा केन्द्र के वार्षिक उत्सव पर तथा दादी जी के यू.एन.ओ. से पीस मेसेन्जर एवार्ड लेने के वापस लौटने पर एक स्वागत समारोह का आयोजन किया गया। करीब ४०० गणमान्य व्यक्तियों ने पुष्पमाला, पुष्पगुच्छ, तथा शाल पहनाकर दादी जी का स्वागत किया।

रायपुर: समाचार मिला है कि रायपुर सेन्ट्रल जेसीज की ओर से मनाये जा रहे जेसीज सप्ताह के अन्तर्गत सर्व धर्म सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें अन्यान्य धर्मावलम्बियों के साथ ब्र.कु. किरण बहन ने भाग लिया। गांधी जयन्ती एवं दशहरा पर्व के शुभ अवसर पर लायन्स क्लब रायपुर द्वारा "गांधी सेवा सप्ताह" का शुभारम्भ सर्व धर्म सम्मेलन आयोजित करके किया गया। ब्र.कु. कमला बहन ने सम्मेलन को सम्बोधित किया। इस तरह पूरे मास तक ईश्वरीय सेवाओं की धूम मची रही।

मोहम्मदपुर (दिल्ली): सेवा केन्द्र के वार्षिक उत्सव के उपलक्ष में "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" की स्थापना के अन्तरगत स्थानीय सेवाकेन्द्र पर राजनीतिज्ञों का कार्यक्रम रखा गया जिसमें निगम पार्षद भ्राता अविनाश चन्द्र जी, ब्लाक प्रेजीडेन्ट तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने भाग लिया। उनको प्रेरणादायक आध्यात्मिक अनुभवों से लाभान्वित किया गया। अन्त में सभी को ईश्वरीय विश्व-विद्यालय का साहित्य सौगात रूप में दिया गया।

सागर सेवाकेन्द्र की ओर से खुरई तहसील में चैतन्य नौ देवियों की झांकी व प्रदर्शनी का कार्यक्रम रखा गया। इसको आस-पास के गांवों के लोगों ने आकर देखा और लाभ उठाया। गावों में गीता पाठशाला खोलने का आग्रह किया है।

बीकानेर: समाचार मिला है कि स्थानीय रतन बिहारी पार्क में नवरात्रों के उपलक्ष में "शान्ति की राह" प्रदर्शनी एवं नौ देवियों की चैतन्य झांकी का कार्यक्रम रखा गया।" सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" के अर्न्तगत प्रथम दिन प्रत्येक वर्ग का एक-एक मुख्य प्रतिनिधि उपस्थित था। कार्यक्रम का उद्घाटन ब्र.कु. हृदय मोहिनी जी द्वारा हुआ। यह कार्यक्रम बहुत ही शान्त एवं आध्यात्मिक माहौल में सम्पन्न हुआ।

कोल्हापुर में सर्व के सहयोग से सुखमय संसार कार्यक्रम का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ। इस कार्यक्रम में यहाँ के जिलाधिकारी ए.के. नन्दकुमार, करवीर पीठ शंकराचार्य विद्याभारती, चेयरमैन विक्रम सिंह आदि प्रमुख व्यक्तियों को आमंत्रित किया गया था। इसके साथ ही एक विशाल शान्ति यात्रा का आयोजन एक सुन्दर झांकी के साथ किया गया। जिसको हजारो आत्माओं ने देखा तथा लाभ उठाया।

मजलिस पार्क (दिल्ली): "सर्व के सहयोग से सुखमय संसार" के उपलक्ष्य में चार दिवसीय कार्यक्रम आजादपुर की एम.सी.डी. कालोनी के पार्क में आयोजित किया गया जिसके अन्तर्गत "सुख पथ प्रदर्शनी" चैतन्य देवियों की झांकी तथा "राजयोग शिविर" रखे गये, अनगिनत आत्माओं ने सुखद अनुभूतियां की।

भिलाई: सेवाकेन्द्र में आस्ट्रेलिया के प्रसिद्ध कलाकार भ्राता ली.जेम्स जी पधारे। इसके उपलक्ष्य में एक आध्यात्मिक समारोह का आयोजन किया गया जिसमें शहर के विशिष्ठ व्यक्तियों को आमंत्रित किया गया। भ्राता ली. जेम्स जी ने अपने दो प्रसिद्ध नाटकों का मंचन किया जिसके माध्यम से

आत्माओं ने परमात्मा का सन्देश प्राप्त किया।

रादौर (कुरुक्षेत्र): गुग्गापीर के मेले के अवसर पर आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। दूर-दूर के गांवों से आने वाले लोगों एवं स्थानीय लोगों ने प्रदर्शनी को देखा एवं ईश्वरीय कार्य की प्रशंसा की।

आगरा:समाचार मिला है कि अखिल भारतीय माथुर वैश्य सम्मेलन के अंतर्गत तहसील बाह में एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी आयोजित की गयी थी जिसमें हजारों माथुर वैश्य आत्माओं ने एवं अन्य जिज्ञासु आत्माओं ने जोकि भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों से आईं थीं आध्यात्मिक लाभ उठाया। कितने ही मुसलमान आत्माओं ने प्रदर्शनी देखी तथा बहुत ही प्रभावित हुए।

सेन्धवा: नवरात्रों के पर्व के अवसर पर ''गीता का भगवान श्रीकृष्ण या शिव'' इस विषय पर प्रदर्शनी लगाई गयी थी जिसमें सेन्धवा नगर के अनेक व्यक्तियों ने ज्ञान लाभ लिया, इसके अलावा बड़गांव में भी सतसंग का आयोजन किया गया जिसमें कई आत्माओं ने लाभ लिया अतः वहां पर गीता पाठशाला खुल गयी है।

उत्तरकाशी: चम्बा (टिहरी) के भाई-बहनों ने ''सर्व के सहयोग से सुखमय संसार'' कार्यक्रम का प्रारम्भ हिमालय पर्वत की दुर्गम चोटियों में से एक चौदह हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित तुंगनाथ से किया। तुंगेश्वर-मन्दिर के पुजारी जी ने परमात्मा शिव के ध्यान का अभ्यास कर तथा शान्ति की किरणों के विकीर्ण करते रहने के रूप में सहयोग करने का संकल्प किया। तथा ईश्वरीय साहित्य अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने में सहयोग देने को कहा।

अलीगढ़ सेवा केन्द्र की ओर से ग्रामीण सेवा हेतु आध्यात्मिक प्रदर्शनियों का आयोजन किया गया जिसमें ग्राम के प्रधानों, सरपंचों की मुख्यता सेवाएं की गयीं।

बम्बई (मुलुंड): प्र. ब्र.कु.ई. विश्व विद्यालय की ओर से थाना शहर के प्रसिद्ध सभागृह गडकरी रंगापतन में ''सर्व के सहयोग से सुखमय संसार'' कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया। इस समारोह का उद्घाटन शहर के मेयर भ्राता बसंतराव जी डावखरे के द्वारा करवाया गया। कार्यक्रम का प्रारम्भ प्रसिद्ध फिल्मी गायिका कु. लीला शेलार के मधुर गीत द्वारा किया गया। इस कार्यक्रम में जिला व्यापारी महामंडल के अध्यक्ष एवं प्रसिद्ध उद्योगपति, विधायक, कलक्टर, पुलिस कमिश्नर आदि उपस्थित थे।

सिन्दरी: सेवाकेन्द्र की ओर से दुर्गा पूजा महोत्सव पर ए.सी.सी. कालोनी में एक त्रिदिवसीय भव्य प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन वहां के कार्यकारी महा प्रबंधक भ्राता जी.एन. श्री निवासन ने दीप प्रज्वलित करके किया। इस प्रदर्शनी द्वारा हजारों आत्माओं को शिव बाबा का सन्देश मिला।

मोरवी: सेवाकेन्द्र द्वारा नवरात्रों के उपलक्ष में चैतन्य देवी की झांकी का उद्घाटन यहां के पी.एस.आई. के द्वारा किया गया। इसके साथ-साथ उद्योग में योग प्रदर्शनी भी लगाई गयी थी जिसके द्वारा अनेकानेक आत्माओं को लाभ पहुंचाया गया।

राँची: संग्रहालय द्वारा दुर्गापूजा के सुअवसर पर भव्य पण्डाल सजाकर मनमोहक ''चैतन्य दुर्गा'' की एक मनोहारी झांकी आयोजित की गई। इस झांकी के साथ-साथ चरित्र निर्माण राजयोग प्रदर्शनी भी आयोजित की गई। इसका उद्घाटन ''रांची एक्सप्रेस'' के प्रबंध निर्देशक तथा संस्कृति विहार राँची के अध्यक्ष श्री सीताराम मारूजी के द्वारा सम्पन्न हुआ। इस झांकी को कई हजार आत्माओं ने देखा तथा लाभ उठाया।

रादौर (कुरुक्षेत्र) में गुग्गा पीर के मेले के अवसर पर आयोजित चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए, नायब तहसीलदार चौधरी रूप सिंह जी।

पोखरा (नेपाल): *श्री बाहिनी के चीफ आफ मिलिट्री भ्राता मदन राज जी को ईश्वरीय संदेश देती हुई ब्र.कु. लक्ष्मी जी*